तालिका 4.1 : कोपेन की योजना के अनुसार भारत के जलवायु प्रदेश

जलवायु के प्रकार	*क्षेत्र*
Amw - लघु शुष्क ऋतु वाला मानसून प्रकार	गोवा के दक्षिण में भारत का पश्चिमी तट
As - शुष्क ग्रीष्म ऋतु वाला मानसून प्रकार	तमिलनाडु का कोरोमंडल तट
Aw - उष्ण कटिबंधीय सवाना प्रकार	कर्क वृत्त के दक्षिण में प्रायद्वीपीय पठार का अधिकतर भाग
BShw - अर्ध शुष्क स्टेपी जलवायु	उत्तर-पश्चिमी गुजरात, पश्चिमी राजस्थान और पंजाब के कुछ भाग
BWhw - गर्म मरुस्थल	राजस्थान का सबसे पश्चिमी भाग
Cwg - शुष्क शीत ऋतु वाला मानसून प्रकार	गंगा का मैदान, पूर्वी राजस्थान, उत्तरी मध्य प्रदेश, उत्तर पूर्वी भारत का अधिकतर प्रदेश
Dfc - लघु ग्रीष्म तथा ठंडी आर्द्र शीत ऋतु वाला जलवायु प्रदेश	अरुणाचल प्रदेश
E - ध्रुवीय प्रकार	जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखण्ड

भूमंडलीय तापन

आप जानते हैं कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है। भूतकाल में जलवायु में भी भूमंडलीय एवं स्थानीय स्तर पर परिवर्तन हुए हैं। जलवायु में परिवर्तन आज भी हो रहे हैं, किंतु ये परिवर्तन अगोचर हैं। अनेक भूवैज्ञानिक साक्ष्य बताते हैं कि एक समय पृथ्वी के विशाल भाग बर्फ से ढके थे (देखें भौतिक भूगोल के आधार नाम पुस्तक का अध्याय 2 'भूवैज्ञानिक समय मापक' रा.शै.अ.प्र.प., 2006)। आपने भूमंडलीय तापन पर वाद-विवाद सुना अथवा पढ़ा होगा। प्राकृतिक कारकों के अतिरिक्त भूमंडलीय तापन के लिए बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण तथा वायुमंडल में प्रदूषणकारी गैसों की वृद्धि जैसी मानवी क्रियाएँ भी महत्त्वपूर्ण उत्तरदायी कारक हैं। भूमंडलीय तापन की चर्चा करते समय आपने 'हरित-गृह प्रभाव' के बारे में भी सुना होगा।

विश्व के तापमान में काफी वृद्धि हो रही है। मानवीय क्रियाओं द्वारा उत्पन्न कार्बन डाईऑक्साइड की वृद्धि चिंता का मुख्य कारण है। जीवाश्म ईंधनों के जलने से वायुमंडल में इस गैस की मात्रा क्रमशः बढ़ रही है। कुछ अन्य गैसें जैसे: मीथेन, क्लोरो-फ्लोरो-कार्बन, ओजोन और नाइट्रस ऑक्साइड वायुमंडल में अल्प मात्रा में विद्यमान हैं। इन्हें तथा कार्बन डाईऑक्साइड को हरितगृह गैसें कहते हैं। कार्बन डाईऑक्साइड की तुलना में अन्य चार गैसें दीर्घ तरंगी विकिरण का ज्यादा अच्छी तरह से अवशोषण करती हैं, इसीलिए हरितगृह प्रभाव को बढ़ाने में उनका अधिक योगदान है। इन्हीं के प्रभाव से पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है।

विगत 150 वर्षों में पृथ्वी की सतह का औसत वार्षिक तापमान बढ़ा है। ऐसा अनुमान है कि सन् 2100 में भूमंडलीय तापमान में लगभग 2° सेल्सियस की वृद्धि हो जाएगी। तापमान की इस वृद्धि से कई अन्य परिवर्तन भी होंगे। इनमें से एक है गर्मी के कारण हिमानियों और समुद्री बर्फ के पिघलने से समुद्र तल का ऊँचा होना। प्रचलित पूर्वानुमान के अनुसार औसत समुद्र तल 21वीं शताब्दी के अंत तक 48 से.मी. ऊँचा हो जाएगा। इसके कारण प्राकृतिक बाढ़ों की संख्या बढ़ जाएगी। जलवायु परिवर्तन से मलेरिया जैसी कीटजन्य बीमारियाँ बढ़ जाएँगी। साथ ही वर्तमान जलवायु सीमाएँ भी बदल जाएँगी, जिसके कारण कुछ भाग कुछ अधिक जलसिक्त (Wet) और अधिक शुष्क हो जाएँगे। कृषि के प्रतिरूप बदल जाएँगे। जनसंख्या और पारितंत्र में भी परिवर्तन होंगे। जरा सोचिए, यदि आज का समुद्र तल 50 से.मी. ऊँचा हो जाए, तो भारत के तटवर्ती क्षेत्रों पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

अभ्यास

1. नीचे दिए गए चार विकल्पों में से सही उत्तर चुनिए:
   (i) जाड़े के आरंभ में तमिलनाडु के तटीय प्रदेशों में वर्षा किस कारण होती है?
      (क) दक्षिण-पश्चिमी मानसून (ख) उत्तर-पूर्वी मानसून
      (ग) शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात (घ) स्थानीय वायु परिसंचरण
   (ii) भारत के कितने भू-भाग पर 75 सेंटीमीटर से कम औसत वार्षिक वर्षा होती है?
      (क) आधा (ख) दो-तिहाई
      (ग) एक-तिहाई (घ) तीन-चौथाई
   (iii) दक्षिण भारत के संदर्भ में कौन-सा तथ्य ठीक नहीं है?
      (क) यहाँ दैनिक तापांतर कम होता है।
      (ख) यहाँ वार्षिक तापांतर कम होता है।
      (ग) यहाँ तापमान सारा वर्ष ऊँचा रहता है।
      (घ) यहाँ जलवायु विषम पाई जाती है।
   (iv) जब सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में मकर रेखा पर सीधा चमकता है, तब निम्नलिखित में से क्या होता है?
      (क) उत्तरी-पश्चिमी भारत में तापमान कम होने के कारण उच्च वायुदाब विकसित हो जाता है।
      (ख) उत्तरी-पश्चिमी भारत में तापमान बढ़ने के कारण निम्न वायुदाब विकसित हो जाता है।
      (ग) उत्तरी-पश्चिमी भारत में तापमान और वायुदाब में कोई परिवर्तन नहीं आता।
      (घ) उत्तरी-पश्चिमी भारत में झुलसा देने वाली तेज लू चलती है।
   (v) कोपेन के वर्गीकरण के अनुसार भारत में 'As' प्रकार की जलवायु कहाँ पाई जाती है?
      (क) केरल और तटीय कर्नाटक में
      (ख) अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में
      (ग) कोरोमंडल तट पर
      (घ) असम व अरुणाचल प्रदेश में
2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए:
   (i) भारतीय मौसम तंत्र को प्रभावित करने वाले तीन महत्त्वपूर्ण कारक कौन-से हैं?
   (ii) अंत:उष्ण कटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र क्या है?
   (iii) मानसून प्रस्फोट से आपका क्या अभिप्राय है? भारत में सबसे अधिक वर्षा प्राप्त करने वाले स्थान का नाम लिखिए।
   (iv) जलवायु प्रदेश क्या होता है? कोपेन की पद्धति के प्रमुख आधार कौन-से हैं?
   (v) उत्तर-पश्चिमी भारत में रबी की फसलें बोने वाले किसानों को किस प्रकार के चक्रवातों से वर्षा प्राप्त होती है? वे चक्रवात कहाँ उत्पन्न होते हैं?
3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 125 शब्दों में लिखिए।
   (i) जलवायु में एक प्रकार का ऐक्य होते हुए भी, भारत की जलवायु में क्षेत्रीय विभिन्नताएँ पाई जाती हैं। उपयुक्त उदाहरण देते हुए इस कथन को स्पष्ट कीजिए।
   (ii) भारतीय मौसम विज्ञान विभाग के अनुसार भारत में कितने स्पष्ट मौसम पाए जाते हैं? किसी एक मौसम की दशाओं की सविस्तार व्याख्या कीजिए।

परियोजना/क्रियाकलाप

भारत के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित को दर्शाइए:
   (i) शीतकालीन वर्षा के क्षेत्र
   (ii) ग्रीष्म ऋतु में पवनों की दिशा
   (iii) 50 प्रतिशत से अधिक वर्षा की परिवर्तिता वाले क्षेत्र
   (iv) जनवरी माह में 15° सेल्सियस से कम तापमान वाले क्षेत्र
   (v) भारत पर 100 सेंटीमीटर की समवर्षा रेखा।

अध्याय

5

प्राकृतिक वनस्पति

क्या आप कभी पिकनिक के लिए जंगल गए हैं? अगर आप शहर में रहते हैं तो अवश्य ही पार्क गए होंगे और अगर गाँव में रहते हैं तो आम, अमरूद या नारियल के बगीचे में गए होंगे। आप प्राकृतिक और मानव रोपित वनस्पति में कैसे अंतर करते हैं, जो पौधा जंगल में प्राकृतिक परिस्थितियों में फलता-फूलता है, वही पेड़ आपके बगीचे में मानव देख-रेख में उगाया जा सकता है।

प्राकृतिक वनस्पति से अभिप्राय उसी पौधा समुदाय से है, जो लंबे समय तक बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के उगता है और इसकी विभिन्न प्रजातियाँ वहाँ पाई जाने वाली मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों में यथासंभव स्वयं को ढाल लेती हैं।

भारत में विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती है। हिमालय पर्वतों पर शीतोष्ण कटिबंधीय वनस्पति उगती है; पश्चिमी घाट तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में उष्ण कटिबंधीय वर्षा वन पाए जाते हैं; डेल्टा क्षेत्रों में उष्ण कटिबंधीय वन व मैंग्रोव तथा राजस्थान के मरुस्थलीय और अर्ध-मरुस्थलीय क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की झाड़ियाँ, कैक्टस और कांटेदार वनस्पति पाई जाती है। मिट्टी और जलवायु में विभिन्नता के कारण भारत में वनस्पति में क्षेत्रीय विभिन्नताएँ पाई जाती हैं।

प्रमुख वनस्पति प्रकार तथा जलवायु परिस्थिति के आधार पर भारतीय वनों को निम्न प्रकारों में बाँटा जा सकता है :

वनों के प्रकार

(i) उष्ण कटिबंधीय सदाबहार एवं अर्ध-सदाबहार वन
(ii) उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वन
(iii) उष्ण कटिबंधीय काँटेदार वन
(iv) पर्वतीय वन
(v) वेलांचली व अनूप वन

उष्ण कटिबंधीय सदाबहार एवं अर्ध-सदाबहार वन

ये वन पश्चिमी घाट की पश्चिमी ढाल पर, उत्तर-पूर्वी क्षेत्र की पहाड़ियों पर और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में पाए जाते हैं। ये उन उष्ण और आर्द्र प्रदेशों में पाए जाते हैं, जहाँ वार्षिक वर्षा 200 सेंटीमीटर से अधिक होती है और औसत वार्षिक तापमान 22° सेल्सियस से अधिक रहता है। उष्ण कटिबंधीय वन सघन और पर्तों वाले होते हैं, जहाँ भूमि के नजदीक झाड़ियाँ और बेलें होती हैं, इनके ऊपर छोटे कद वाले पेड़ और सबसे ऊपर लंबे पेड़ होते हैं। इन वनों में वृक्षों की लंबाई 60 मीटर या उससे भी अधिक हो सकती है। चूँकि, इन पेड़ों के पत्ते झड़ने, फूल आने और फल लगने का समय अलग-अलग है, इसलिए ये वर्ष भर हरे-भरे दिखाई देते हैं। इसमें पाई जाने वाले मुख्य वृक्ष प्रजातियाँ रोजवुड, महोगनी, ऐनी और एबनी हैं।

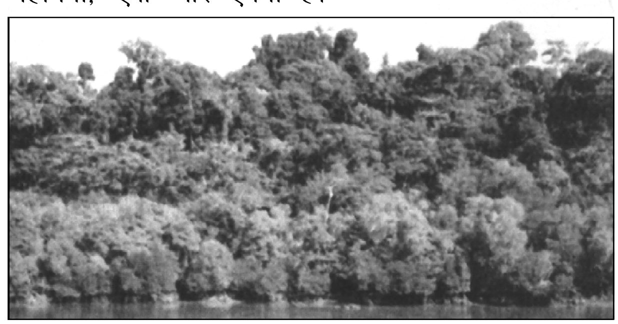

चित्र 5.1 : सदाबहार वन

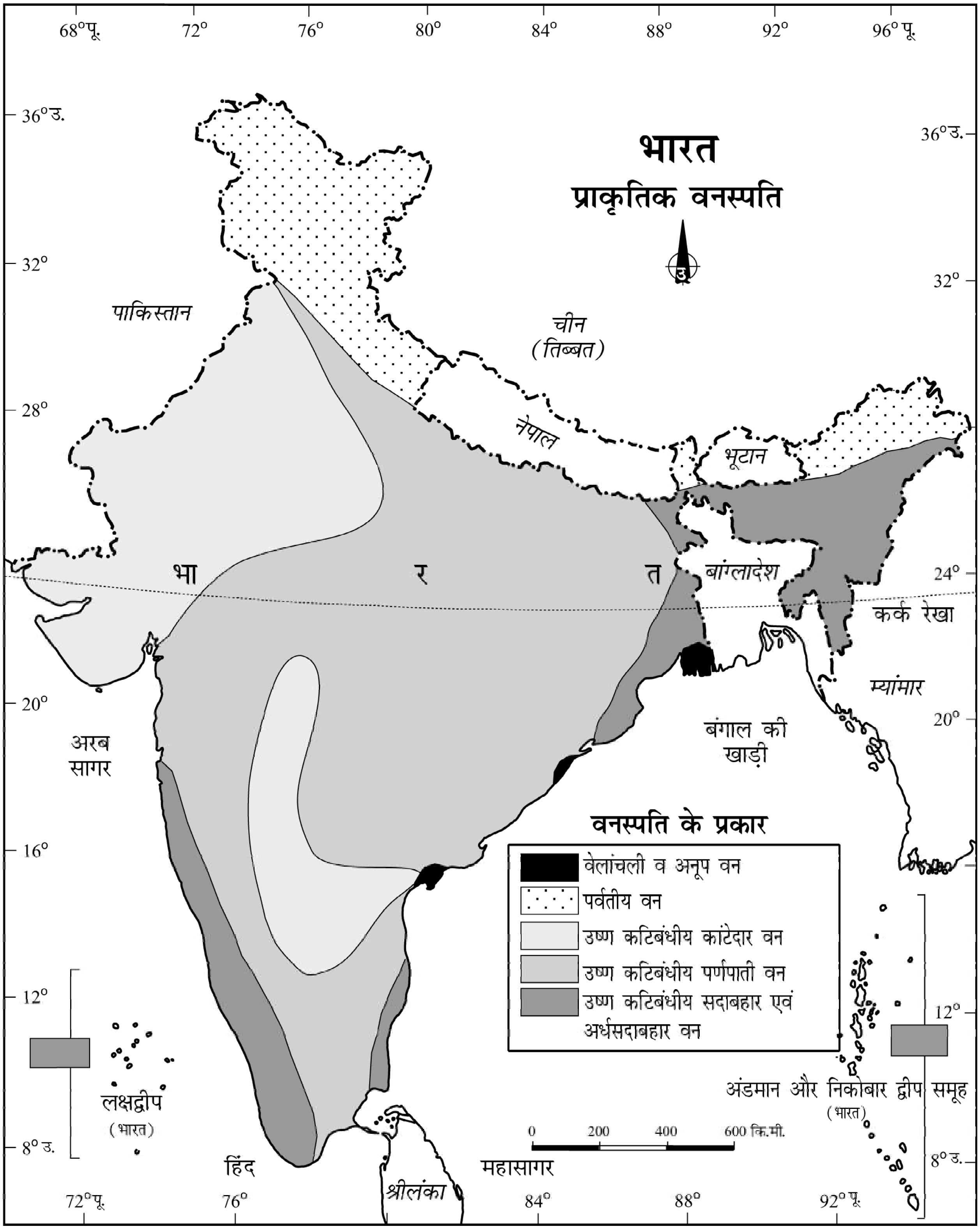

चित्र 5.2 : प्राकृतिक वनस्पति

अर्ध-सदाबहार वन, इन्हीं क्षेत्रों में, अपेक्षाकृत कम वर्षा वाले भागों में पाए जाते हैं। ये वन सदाबहार और आर्द्र पर्णपाती वनों के मिश्रित रूप हैं। इनमें मुख्य वृक्ष प्रजातियाँ साइडर, होलक और कैल हैं।

अंग्रेज, भारत में वनों की आर्थिक महत्ता को समझते थे और इसीलिए उन्होंने इनका बड़े पैमाने पर दोहन करना शुरू किया। इससे वनों की संरचना भी बदलती चली गई। गढ़वाल और कुमाऊँ में पाए जाने वाले ओक के स्थान पर चीड़ के पेड़ उगाए गए, जो रेल पटरी बिछाने के लिए आवश्यक थे। चाय, कॉफी और रबड़ के बागान लगाने के लिए भी वनों को साफ किया गया। लकड़ी ऊष्मा रोधक होती है, इसलिए अंग्रेजों ने इसका प्रयोग इमारत निर्माण में भी भरपूर मात्रा में किया। इस तरह से संरक्षण को भूलकर वनों का व्यापारिक इस्तेमाल शुरू हुआ।

उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वन

भारतवर्ष में, ये वन बहुतायत में पाए जाते हैं। इन्हें मानसून वन भी कहा जाता है। ये वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं, जहाँ वार्षिक वर्षा 70 से 200 सेंटीमीटर होती है। जल उपलब्धता के आधार पर इन वनों को आर्द्र और शुष्क पर्णपाती वनों में विभाजित किया जाता है।

चित्र 5.3 : पर्णपाती वन

आर्द्र पर्णपाती वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं, जहाँ वर्षा 100 से 200 सेंटीमीटर होती है। ये वन उत्तर-पूर्वी राज्यों और हिमालय के गिरीपद, पश्चिमी घाट के पूर्वी ढालों और ओडिशा में उगते हैं। सागवान, साल, शीशम, हुर्रा, महुआ, आँवला, सेमल, कुसुम और चंदन आदि प्रजातियों के वृक्ष इन वनों में पाए जाते हैं।

शुष्क पर्णपाती वन, देश के उन विस्तृत भागों में मिलते हैं, जहाँ वर्षा 70 से 100 सेंटीमीटर होती है। आर्द्र क्षेत्रों की ओर ये वन आर्द्र पर्णपाती और शुष्क क्षेत्रों की ओर काँटेदार वनों में मिल जाते हैं। ये वन प्रायद्वीप में अधिक वर्षा वाले भागों और उत्तर प्रदेश व बिहार के मैदानी भागों में पाए जाते हैं। अधिक वर्षा वाले प्रायद्वीपीय पठार और उत्तर भारत के मैदानों में ये वन पार्कनुमा भूदृश्य बनाते हैं, जहाँ सागवान और अन्य पेड़ों के बीच हरी-भरी घास होती है। शुष्क ऋतु शुरू होते ही इन पेड़ों के पत्ते झड़ जाते हैं और घास के मैदान में नग्न पेड़ खड़े रह जाते हैं। इन वनों में पाए जाने वाले मुख्य पेड़ों में तेंदु, पलास, अमलतास, बेल, खैर और अक्सलवूड (Axlewood) इत्यादि हैं। राजस्थान के पश्चिमी और दक्षिणी भागों में कम वर्षा और अत्यधिक पशु चारण के कारण प्राकृतिक वनस्पति बहुत विरल है।

उष्ण कटिबंधीय कांटेदार वन

उष्ण कटिबंधीय काँटेदार वन उन भागों में पाए जाते हैं, जहाँ वर्षा 50 सेंटीमीटर से कम होती है। इन वनों में कई प्रकार के घास और झाड़ियाँ शामिल हैं। इसमें दक्षिण-पश्चिमी पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के अर्ध-शुष्क क्षेत्र शामिल हैं। इन वनों में पौधे लगभग पूरे वर्ष पर्णरहित रहते हैं और झाड़ियों जैसे लगते हैं। इनमें पाई जाने वाली मुख्य प्रजातियाँ बबूल, बेर, खजूर, खैर, नीम, खेजड़ी और पलास इत्यादि हैं। इन वृक्षों के नीचे लगभग 2 मीटर लंबी गुच्छ घास उगती है।

चित्र 5.4 : उष्ण कटिबंधीय काँटेदार वन

पर्वतीय वन

पर्वतीय क्षेत्रों में ऊँचाई के साथ तापमान घटने के साथ-साथ प्राकृतिक वनस्पति में भी बदलाव आता है। इन वनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है – उत्तरी पर्वतीय वन और दक्षिणी पर्वतीय वन।

ऊँचाई बढ़ने के साथ हिमालय पर्वत शृंखला में उष्ण कटिबंधीय वनों से टुण्ड्रा में पाई जाने वाली प्राकृतिक वनस्पति पायी जाती है। हिमालय के गिरीपद पर पर्णपाती वन पाए जाते हैं। इसके बाद 1,000 से 2,000 मीटर की ऊँचाई पर आर्द्र शीतोष्ण कटिबंधीय प्रकार के वन पाए जाते हैं। उत्तर-पूर्वी भारत की उच्चतर पहाड़ी शृंखलाओं और पश्चिम बंगाल और उत्तरांचल के पहाड़ी इलाकों में चौड़े पत्तों वाले ओक और चेस्टनट जैसे सदाबहार वन पाए जाते हैं। इस क्षेत्र में 1,500 से 1,750 मीटर की ऊँचाई पर व्यापारिक महत्त्व वाले चीड़ के वन पाए जाते हैं। हिमालय के पश्चिमी भाग में बहुमूल्य वृक्ष प्रजाति देवदार के वन पाए जाते हैं। देवदार की लकड़ी अधिक मजबूत होती है और निर्माण कार्य में प्रयुक्त होती है। इसी तरह चिनार और वालन जिसकी लकड़ी कश्मीर हस्तशिल्प के लिए इस्तेमाल होती है, पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। बल्यूपाइन और स्प्रूस 2,225 से 3,048 मीटर की ऊँचाई पर पाए जाते हैं। इस ऊँचाई पर कई स्थानों पर शीतोष्ण कटिबंधीय घास भी उगती है। इससे अधिक ऊँचाई पर एल्पाईन वन और चारागाह पाए जाते हैं। 3,000 से 4,000 मीटर की ऊँचाई पर सिल्वर फर, जूनिपर, पाइन, बर्च और रोडोडेन्ड्रॉन आदि वृक्ष मिलते हैं। ऋतु-प्रवास करने वाले समुदाय जैसे गुज्जर, बकरवाल, गड्डी और भुटिया, इन चरागाहों का पशु चारण के लिए भरपूर प्रयोग करते हैं। शुष्क उत्तरी ढालों की तुलना में अधिक वर्षा वाले हिमालय के दक्षिणी ढालों पर अधिक वनस्पति पाई जाती है। अधिक ऊँचाई वाले भागों में टुण्ड्रा वनस्पति जैसे मॉस व लाइकन आदि पाई जाती है।

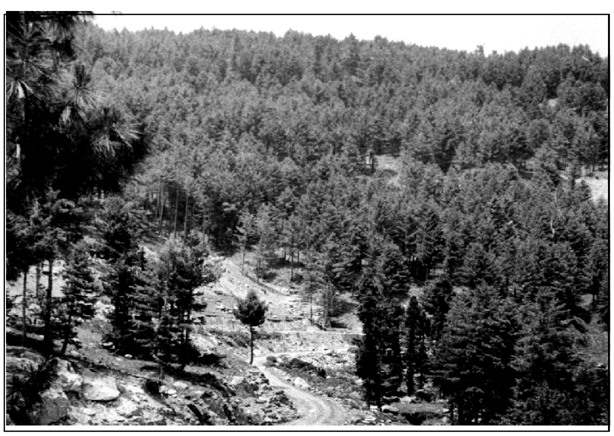

चित्र 5.5 : पर्वतीय वन

दक्षिणी पर्वतीय वन मुख्यत: प्रायद्वीप के तीन भागों में मिलते हैं : पश्चिमी घाट, विंध्याचल और नीलगिरी पर्वत शृंखलाएँ। चूँकि, ये शृंखलाएँ उष्ण कटिबंध में पड़ती हैं और इनकी समुद्र तल से ऊँचाई लगभग 1,500 मीटर ही है, इसलिए यहाँ ऊँचाई वाले क्षेत्र में शीतोष्ण कटिबंधीय और निचले क्षेत्रों में उपोष्ण कटिबंधीय प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती है। केरल, तमिलनाडु और कर्नाटक प्रांतों, में पश्चिमी घाट में इस तरह की वनस्पति विशेषकर पाई जाती है। नीलगिरी, अन्नामलाई और पालनी पहाड़ियों पर पाए जाने वाले शीतोष्ण कटिबंधीय वनों को 'शोलास' के नाम से जाना जाता है। इन वनों में पाए जाने वाले वृक्षों मगनोलिया, लैरेल, सिनकोना और वैटल का आर्थिक महत्त्व है। ये वन सतपुड़ा और मैकाल श्रेणियों में भी पाए जाते हैं।

वेलांचली व अनूप वन

भारत में विभिन्न प्रकार के आर्द्र व अनूप आवास पाए जाते हैं। इसके 70 प्रतिशत भाग पर चावल की खेती की जाती है। भारत में लगभग 39 लाख हेक्टेयर भूमि आर्द्र है। ओडिशा में चिलका और भरतपुर में केउलादेव राष्ट्रीय पार्क, अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की आर्द्र भूमियों के अधिवेशन (रामसर अधिवेशन) के अंतर्गत रक्षित जलकुक्कुट आवास हैं।

> अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों के बीच एक समझौता है।

हमारे देश की आर्द्र भूमि को आठ वर्गों में रखा गया है, जो इस प्रकार हैं: (i) दक्षिण में दक्कन पठार के जलाशय और दक्षिण-पश्चिमी तटीय क्षेत्र की लैगून व अन्य आर्द्र भूमि; (ii) राजस्थान, गुजरात और कच्छ की

खारे जल वाली भूमि; (iii) गुजरात-राजस्थान से पूर्व (केउलादेव राष्ट्रीय पार्क) और मध्य प्रदेश की ताजा जल वाली झीलें व जलाशय; (iv) भारत के पूर्वी तट पर डेल्टाई आर्द्र भूमि व लैगून (चिलका झील आदि); (v) गंगा के मैदान में ताजा जल वाले कच्छ क्षेत्र; (vi) ब्रह्मपुत्र घाटी में बाढ़ के मैदान व उत्तर-पूर्वी भारत और हिमालय गिरीपद के कच्छ एवं अनूप क्षेत्र; (vii) कश्मीर और लद्दाख की पर्वतीय झीलें और नदियाँ; (viii) अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के द्वीप चापों के मैंग्रोव वन और दूसरे आर्द्र क्षेत्र। मैंग्रोव लवण कच्छ, ज्वारीय सँकरी खाड़ी, पंक मैदानों और ज्वारनदमुख के तटीय क्षेत्रों पर उगते हैं। इसमें बहुत से लवण से न प्रभावित होने वाले पेड़-पौधे होते हैं। बंधे जल व ज्वारीय प्रवाह की सँकरी खाड़ियों से आड़े-तिरछे ये वन विभिन्न किस्म के पक्षियों को आश्रय प्रदान करते हैं।

भारत में मैंग्रोव वन 6,740 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हैं, जो विश्व के मैंग्रोव क्षेत्र का 7 प्रतिशत है। ये अंडमान और निकोबार द्वीप समूह व पश्चिम बंगाल के सुंदर वन डेल्टा में अत्यधिक विकसित हैं। इसके अलावा ये महानदी, गोदावरी और कृष्णा नदियों के डेल्टाई भाग में पाए जाते हैं। इन वनों में बढ़ते अतिक्रमण के कारण इनका संरक्षण आवश्यक हो गया है।

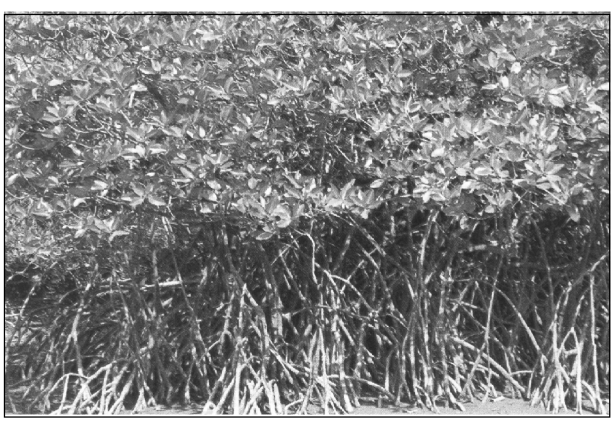

चित्र 5.6 : मैंग्रोव वन

भारत में वन आवरण

राजस्व विभाग से प्राप्त आँकड़ों के अनुसार भारत में 23.28 प्रतिशत भाग पर वन हैं। उल्लेखनीय यह है कि आँकड़ों के अनुसार वन क्षेत्र और वास्तविक वन आवरण अलग-अलग हैं। वन क्षेत्र राजस्व विभाग के अनुसार अधिसूचित क्षेत्र है, चाहे वहाँ वृक्ष हों या न हों, जबकि वन आवरण प्राकृतिक वनस्पति का झुरमुट है और वास्तविक रूप में वनों से ढका है। वन क्षेत्र राज्यों के राजस्व विभाग से प्राप्त होता है, जबकि वन आवरण की पहचान वायु चित्रों और उपग्रह से प्राप्त चित्रों से की जाती है। इंडिया स्टेट फॉरेस्ट रिपोर्ट 2011 के अनुसार वास्तविक वन आवरण केवल 21.05 प्रतिशत है। उनमें से 12.29 प्रतिशत भाग पर सघन वन और 8.75 प्रतिशत पर विवृत वन पाए जाते हैं।

वन क्षेत्र और वन आवरण दोनों में ही राज्यवार भिन्नता पाई जाती हैं। जहाँ लक्षद्वीप में वन क्षेत्र शून्य है, वहीं अंडमान और निकोबार में 86.93 प्रतिशत क्षेत्र वन के अधीन है। 10 प्रतिशत से कम वन क्षेत्र वाले राज्य मुख्य तौर पर देश के उत्तर और उत्तर-पश्चिम भाग में स्थित हैं। ये राज्य राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, और दिल्ली हैं। गुजरात, राजस्थान और हरियाणा तो अर्ध शुष्क इलाके हैं। पंजाब और हरियाणा के अधिकतर वनों को कृषि के लिए साफ कर दिया गया है। तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल उन राज्यों में से हैं, जिनके 10 से 20 प्रतिशत भाग पर वन पाए जाते हैं। प्रायद्वीपीय भारत में दादर और नगर हवेली, तमिलनाडु और गोवा को छोड़कर शेष सभी राज्यों में 20 से 30 प्रतिशत भूमि वनों के अधीन है। उत्तर-पूर्वी राज्यों में 30 प्रतिशत से अधिक भूमि पर वन पाए जाते हैं। पर्वतीय स्थलाकृति और अधिक वर्षा वन विकास के लिए उपयुक्त होती है।

वन क्षेत्र की तरह वास्तविक वन आवरण में भी भिन्नताएँ पाई जाती हैं, जो कि जम्मू और कश्मीर में 9.5 प्रतिशत से अंडमान-निकोबार में 84.01 प्रतिशत तक है। भारत में वनों की वितरण तालिका (परिशिष्ट IV) से यह स्पष्ट होता है कि 15 राज्यों में कुल भूमि के 33 प्रतिशत से अधिक भाग पर वन पाए जाते हैं, जो कि पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए एक आधारभूत आवश्यकता है।

वास्तविक वन आवरण के अधीन क्षेत्र के आधार पर राज्यों को चार प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है।

प्रदेश	*वन आवरण का प्रतिशत*
(i) अधिक वन संकेंद्रण वाले प्रदेश	> 40
(ii) मध्यम वन संकेंद्रण वाले प्रदेश	20 - 40
(iii) कम वन संकेंद्रण वाले प्रदेश	10 - 20
(iv) अति कम वन संकेंद्रण वाले प्रदेश	< 10

परिशिष्ट-IV से आँकड़े लेकर, राज्यों को चार वन आवरण क्षेत्रों में विभाजित करो।

वन और जीवन

असंख्य जनजातीय लोगों के लिए वन एक आवास, रोजी-रोटी और अस्तित्त्व है। ये उन्हें भोजन, फल, खाने लायक वनस्पति, शहद, पौष्टिक जड़ें और शिकार के लिए वन्य जानवर प्रदान करते हैं। ये उन्हें घर बनाने का सामान और कलाकारी की वस्तुएँ देते हैं। जनजातीय समुदायों के लिए वनों की महत्ता सभी जानते हैं, क्योंकि ये उनके जीवन और आर्थिक क्रियाओं के आधार हैं। साधारणतया यह माना जाता है कि भारत के 593 जिलों में से 188 जनजातीय जिलें हैं। ये जनजातीय जिले भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 33.63 प्रतिशत हिस्सा है, परन्तु देश का 59.61 प्रतिशत वन आवरण इन्हीं जिलों में पाया जाता है। इससे पता चलता है कि जनजातीय जिले वन संपदा के धनी हैं।

वनों और जनजाति समुदायों में घनिष्ठ संबंध है और इनमें से एक का विकास दूसरे के बिना असंभव है। वनों के विषय में इनके प्राचीन व्यावहारिक ज्ञान को वन विकास में प्रयोग किया जा सकता है। जनजातियों को वनों से गौण उत्पाद संग्रह करने वाले न समझ कर, उन्हें वन संरक्षण में भागीदार बनाया जाना चाहिए।

वन संरक्षण

वनों का जीवन और पर्यावरण के साथ जटिल संबंध है। वन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से हमें बहुत आर्थिक व सामाजिक लाभ पहुँचाते हैं। अत: वनों के संरक्षण की मानवीय विकास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। फलस्वरूप भारत सरकार ने पूरे देश के लिए वन संरक्षण नीति 1952 में लागू की जिसे 1988 में संशोधित किया गया। इस नई वन नीति के अनुसार सरकार सतत्पोष्णीय वन प्रबंध पर बल देगी जिससे एक ओर वन संसाधनों का संरक्षण व विकास किया जाएगा और दूसरी तरफ स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं को पूरा किया जाएगा।

इस वन नीति के निम्नलिखित उद्देश्य हैं : (i) देश में 33 प्रतिशत भाग पर वन लगाना, जो वर्तमान राष्ट्रीय स्तर से 6 प्रतिशत अधिक है; (ii) पर्यावरण संतुलन बनाए रखना तथा पारिस्थितिक असंतुलित क्षेत्रों में वन लगाना; (iii) देश की प्राकृतिक धरोहर, जैव विविधता तथा आनुवांशिक पूल का संरक्षण; (iv) मृदा अपरदन और मरुस्थलीकरण रोकना तथा बाढ़ व सूखा नियंत्रण; (v) निम्नीकृत भूमि पर सामाजिक वानिकी एवं वनरोपण द्वारा वन आवरण का विस्तार; (vi) वनों की उत्पादकता बढ़ाकर वनों पर निर्भर ग्रामीण जनजातियों को इमारती लकड़ी, ईंधन, चारा और भोजन उपलब्ध करवाना और लकड़ी के स्थान पर अन्य वस्तुओं को प्रयोग में लाना; (vii) पेड़ लगाने को बढ़ावा देने के लिए, पेड़ों की कटाई रोकने के लिए जन-आंदोलन चलाना, जिसमें महिलाएँ भी शामिल हों, ताकि वनों पर दबाव कम हो।

इस वन संरक्षण नीति के अंतर्गत निम्न कदम उठाए गए हैं।

सामाजिक वानिकी

सामाजिक वानिकी का अर्थ है पर्यावरणीय, सामाजिक व ग्रामीण विकास में मदद के उद्देश्य से वनों का प्रबंध और सुरक्षा तथा ऊसर भूमि पर वनरोपण।

राष्ट्रीय कृषि आयोग (1976-79) ने सामाजिक वानिकी को तीन वर्गों में बाँटा है - शहरी वानिकी, ग्रामीण वानिकी और फार्म वानिकी।

शहरों और उनके इर्द-गिर्द निजी व सार्वजनिक भूमि, जैसे - हरित पट्टी, पार्क, सड़कों के साथ जगह, औद्योगिक व व्यापारिक स्थलों पर वृक्ष लगाना और उनका प्रबंध शहरी वानिकी के अंतर्गत आता है।

ग्रामीण वानिकी में कृषि वानिकी और समुदाय कृषि वानिकी को बढ़ावा दिया जाता है।

कृषि वानिकी का अर्थ है कृषियोग्य तथा बंजर भूमि पर पेड़ और फसलें एक साथ लगाना। इसका अभिप्राय है वानिकी और खेती एक साथ करना, जिससे खाद्यान्न,

चारा, ईंधन, इमारती लकड़ी और फलों का उत्पादन एक साथ किया जाए। समुदाय वानिकी में सार्वजनिक भूमि, जैसे- गाँव-चरागाह, मंदिर-भूमि, सड़कों के दोनों ओर, नहर किनारे, रेल पट्टी के साथ पटरी और विद्यालयों में पेड़ लगाना शामिल है। इसका उद्देश्य पूरे समुदाय को लाभ पहुँचाना है। इस योजना का एक उद्देश्य भूमिविहीन लोगों को वानिकीकरण से जोड़ना तथा इससे उन्हें वे लाभ पहुँचाना जो केवल भूस्वामियों को ही प्राप्त होते हैं।

फार्म वानिकी

फार्म वानिकी के अंतर्गत किसान अपने खेतों में व्यापारिक महत्त्व वाले या दूसरे पेड़ लगाते हैं। वन विभाग, इसके लिए छोटे और मध्यम किसानों को नि:शुल्क पौधे उपलब्ध कराता है। इस योजना के तहत कई तरह की भूमि, जैसे - खेतों की मेड़ें, चरागाह, घासस्थल, घर के पास पड़ी खाली जमीन और पशुओं के बाड़ों में भी पेड़ लगाए जाते हैं।

वन्य प्राणी

आपने चिड़िया घर में पिंजरों में जंतु और पक्षी दोनों देखे होंगे। भारत में वन्य प्राणी एक महान प्राकृतिक धरोहर है। यह अनुमान लगाया गया है कि विश्व के ज्ञात पौधों और प्राणियों की किस्मों में से 4-5 प्रतिशत किस्में भारत में पाई जाती हैं। हमारे देश में इतने बड़े पैमाने पर जैव विविधता पाए जाने का कारण यहाँ पर पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र हैं, जिन्हें हमने युगों से संरक्षित रखा है। समय के साथ पारिस्थितिकी तंत्रों के आवास मानव क्रियाओं द्वारा प्रभावित हुए और परिणामस्वरूप जैव प्रजातियों की संख्या काफी कम हो गई है। कुछ जैव प्रजातियाँ तो लुप्त होने के कगार पर हैं।

वन्य प्राणियों की संख्या कम होने के मुख्य कारण इस प्रकार हैं :

(i) औद्योगिकी और तकनीकी विकास के कारण वनों के दोहन की गति तेज हुई;

(ii) खेती, मानवीय बस्ती, सड़कों, खदानों, जलाशयों इत्यादि के लिए जमीन से वनों को साफ किया गया;

(iii) स्थानीय लोगों ने चारे, ईंधन और इमारती लकड़ी के लिए वनों से पेड़ काटे और वनों पर दबाव बढ़ाया;

(iv) पालतू पशुओं के लिए नए चरागाहों की खोज में मानव ने वन्य जीवों और उनके आवासों को नष्ट किया;

(v) रजवाड़ों तथा सम्भ्रांत वर्ग ने शिकार को क्रीड़ा बनाया और एक ही बार में सैकड़ों वन्य जीवों को शिकार बनाया। व्यापारिक महत्त्व के लिए अभी भी पशुओं को मारा जा रहा है;

(vi) जंगलों में आग लगने से भी वन और वन्य प्राणियों की प्रजातियाँ नष्ट हुईं।

यह महसूस किया जा रहा है कि राष्ट्रीय व विश्व प्राकृतिक धरोहर को बचाने और पारिस्थितिक पर्यटन (Eco-tourism) को बढ़ावा देने के लिए वन्य प्राणियों का संरक्षण बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस दिशा में सरकार ने क्या कदम उठाए हैं?

भारत में वन्य प्राणी संरक्षण

भारत में वन्य प्राणियों के बचाव की परिपाटी बहुत पुरानी है। पंचतंत्र और जंगल बुक इत्यादि की कहानियाँ हमारे वन्य प्राणियों के प्रति प्रेम का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इनका युवाओं पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव है।

वन्य प्राणी अधिनियम, 1972 में पास हुआ, जो वन्य प्राणियों के संरक्षण और रक्षण की कानूनी रूपरेखा तैयार करता है। उस अधिनियम के दो मुख्य उद्देश्य हैं; अधिनियम के तहत अनुसूची में सूचीबद्ध संकटापन्न प्रजातियों को सुरक्षा प्रदान करना तथा नेशनल पार्क, पशु विहार जैसे संरक्षित क्षेत्रों को कानूनी सहायता प्रदान करना। इस अधिनियम को 1991 में पूर्णतया संशोधित कर दिया गया जिसके तहत कठोर सजा का प्रावधान किया गया है। इसमें कुछ पौधों की प्रजातियों को बचाने तथा संकटापन्न प्रजातियों के संरक्षण का प्रावधान है।

देश में 103 नेशनल पार्क और 535 वन्य प्राणी अभयवन हैं। (परिशिष्ट V)

वन्य प्राणी संरक्षण का दायरा काफी बड़ा है और

इसमें मानव कल्याण की असीम संभावनाएँ निहित हैं। यद्यपि इस लक्ष्य को तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब हर व्यक्ति इसका महत्त्व समझे और अपना योगदान दे।

यूनेस्को के 'मानव और जीवमंडल योजना' (Man and Biosphere Programme) के तहत भारत सरकार ने वनस्पति जात और प्राणि जात के संरक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

प्रोजेक्ट टाईगर (1973) और प्रोजेक्ट एलीफेंट (1992) जैसी विशेष योजनाएँ इन जातियों के संरक्षण और उनके आवास के बचाव के लिए चलायी जा रही हैं। इनमें से प्रोजेक्ट टाईगर 1973 से चलाई जा रही है। इसका मुख्य उद्देश्य भारत में बाघों की जनसंख्या का स्तर बनाए रखना है, जिससे वैज्ञानिक, सौन्दर्यात्मक सांस्कृतिक और पारिस्थितिक मूल्य बनाए रखे जा सकें। इससे प्राकृतिक धरोहर को भी संरक्षण मिलेगा जिसका लोगों को शिक्षा और मनोरंजन के रूप में फायदा होगा। शुरू में यह योजना नौ बाघ निचयों (आरक्षित क्षेत्रों) में शुरू की गई थी और ये 16,339 वर्ग किलोमीटर पर फैली थी। अब यह योजना 44 क्रोड बाघ निचयों में चल रही है और इनका क्षेत्रफल 36,988.28 वर्ग किलोमीटर है और 17 राज्यों में व्याप्त है। देश में बाघों की संख्या 2006 में 1,411 से बढ़कर 2010 में 1,706 हो गई।

चित्र 5.7 : अपने प्राकृतिक आवास में हाथी

यह योजना मुख्य रूप से बाघ केंद्रित है, परन्तु फिर भी पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता पर जोर दिया जाता है। बाघों की संख्या का स्तर तभी ऊँचा रह सकता है जब पारिस्थितिक तंत्र के विभिन्न पोषण स्तरों और इसकी भोजन कड़ी को बनाए रखा जाए।

इसके अलावा भारत सरकार द्वारा कुछ और परियोजनाएँ, जैसे – मगरमच्छ प्रजनन परियोजना, हगुंल परियोजना और हिमालय कस्तूरी मृग परियोजना भी चलाई जा रही है।

जीव मंडल निचय

जीव मंडल निचय (आरक्षित क्षेत्र) विशेष प्रकार के भौमिक और तटीय परिस्थितिक तंत्र हैं, जिन्हें यूनेस्को (UNESCO) के मानव और जीव मंडल प्रोग्राम (MAB) के अंतर्गत मान्यता प्राप्त है। जैसा कि आरेख 5.1 में दिखाया गया है, जीव मंडल निचय के तीन मुख्य उद्देश्य हैं।

भारत में 18 जीव मंडल निचय हैं (परियोजना – 5.1)। इनमें से 10 जीव मंडल निचय। यूनेस्को द्वारा जीव मंडल निचय विश्व नेटवर्क पर मान्यता प्राप्त हैं।

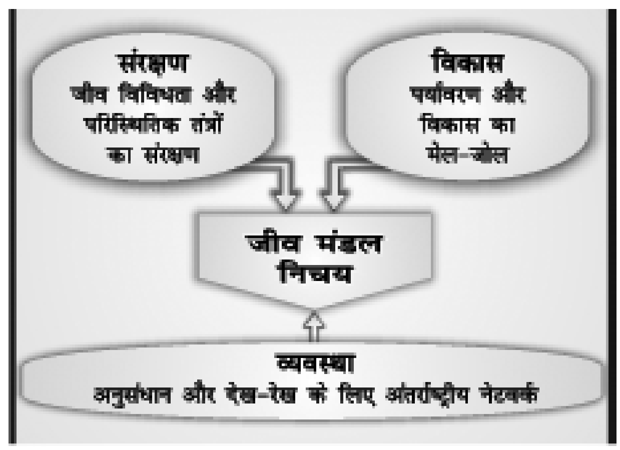

चित्र 5.8 : जीव मंडल निचय के उद्देश्य

नीलगिरी जीव मंडल निचय

इसकी स्थापना 1986 में हुई थी और यह भारत का पहला जीव मंडल निचय है। इस निचय में वायनाड वन्य जीवन सुरक्षित क्षेत्र, नगरहोल, बांदीपुर और मदुमलाई, निलंबूर का सारा वन से ढका ढाल, ऊपरी नीलगिरी पठार, सायलेंट वैली और सिदुवानी पहाड़ियाँ शामिल हैं। इस जीव मंडल निचय का कुल क्षेत्र 5,520 वर्ग किलोमीटर है।

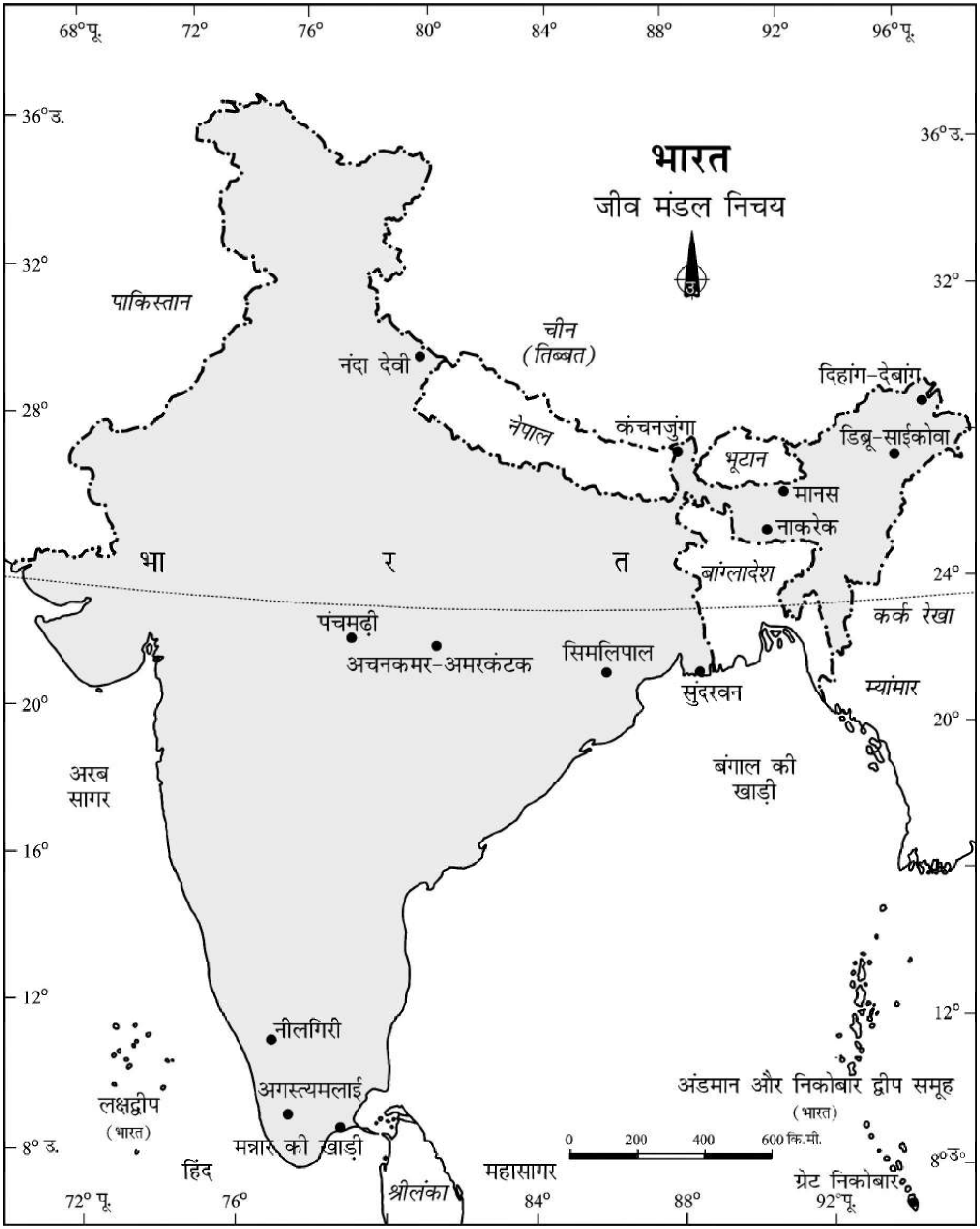

चित्र 5.8 : भारत : जीव मंडल निचय

नीलगिरी जीव मंडल निचय में विभिन्न प्रकार के आवास और मानव क्रिया द्वारा कम प्रभावित प्राकृतिक वनस्पति व सूखी झाड़ियाँ, जैसे – शुष्क और आर्द्र पर्णपाती वन, अर्ध-सदाबहार और आर्द्र सदाबहार वन, सदाबहार शोलास, घास के मैदान और दलदल शामिल हैं। यहाँ पर दो संकटापन्न प्राणी प्रजातियों, नीलगिरी ताहर (Tahr) और शेर जैसी दुम वाले बंदर की सबसे अधिक संख्या पाई जाती है। नीलगिरी निचय में हाथी, बाघ, गौर, सांभर और चीतल जानवरों की दक्षिण भारत में सबसे ज्यादा संख्या तथा कुछ संकटापन्न और क्षेत्रीय विशेष पौधे पाए जाते हैं। इस क्षेत्र में कुछ ऐसी जनजातियों के आवास भी स्थित हैं, जो पर्यावरण के साथ सामंजस्य करके रहने के लिए विख्यात हैं।

इस जीव मंडल की स्थलाकृति उबड़-खाबड़ है और समुद्र तल से ऊँचाई 250 मीटर से 2,650 मीटर तक है। पश्चिम घाट में पाए जाने वाले 80 प्रतिशत फूलदार पौधे इसी निचय में मिलते हैं।

नंदा देवी जीव मंडल निचय

नंदा देवी जीव मंडल निचय उत्तराखंड में स्थित है, जिसमें चमोली, अल्मोड़ा, पिथौरागढ़ और बागेश्वर जिलों के भाग शामिल हैं।

यहाँ पर मुख्यत: शीतोष्ण कटिबंधीय वन पाए जाते हैं। यहाँ पाई जाने वाली प्रजातियों में सिल्वर वुड तथा लैटीफोली जैसे ओरचिड और रोडोडेंड्रॉन शामिल हैं। उस जीव मंडल निचय में कई प्रकार के वन्य जीव, जैसे- हिम तेंदुआ (Snow leopard), काला भालू, भूरा भालू, कस्तूरी मृग, हिम-मुर्गा, सुनहरा बाज और काला बाज पाए जाते हैं।

तालिका 5.1 : जीव मंडल निचयों की सूची

क्र. सं.	*जीव मंडल निचय का नाम एवं कुल भौगोलिक क्षेत्र (वर्ग कि.मी. में)*	*नामित तिथि*	*स्थिति (प्रांत)*
1.	**नीलगिरी (5520)**	01.08.1986	वायनाद, नगरहोल, बांदीपुर, मुदुमलाई, निलंबूर, सायलेंट वैली और सिरुवली पहाड़ियाँ (तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक)
2.	**नंदा देवी (5860.69)**	18.01.1988	चमोली, पिथौरागढ़ और अल्मोड़ा जिलों के भाग (उत्तराखंड)
3.	**नोकरेक (820)**	01.09.1988	गारो पहाड़ियों का हिस्सा (मेघालय)
4.	**मानस (2837)**	14.03.1989	कोकराझार, बोगाई गाँव, बरपेटा, नलबाड़ी कामरूप व दारांग जिलों के हिस्से (असम)
5.	**सुंदर वन (9630)**	29.03.1989	गंगा-ब्रह्मपुत्र नदी तंत्र का डेल्टा व इसका हिस्सा (पश्चिम बंगाल)
6.	**मन्नार की खाड़ी (10500)**	18.02.1989	तमिलनाडु के उत्तर में रामेश्वरम द्वीप से दक्षिण में कन्याकुमारी तक विस्तृत मन्नार की खाड़ी का भारतीय भाग
7.	**ग्रेट निकोबार (885)**	06.01.1989	अंडमान-निकोबार के सुदूर दक्षिणी द्वीप (अंडमान निकोबार द्वीप समूह)
8.	**सिमिलीपाल (4374)**	21.06.1994	मयूरभंज जिले के भाग (उड़ीसा)
9.	डिब्रू-साईकोवा (765)	28.07.1997	डिब्रूगढ़ और तिनसुकिया जिलों के भाग (असम)
10.	दिहांग-देबाँग (5111.5)	02.09.1998	अरुणाचल प्रदेश में सियाँग और देबाँग जिलों के भाग
11.	**पंचमढ़ी (4981.72)**	03.03.1999	बेतूल, होशंगाबाद और छिंदवाड़ा जिलों के भाग (मध्य प्रदेश)
12.	कंचनजुंगा (2619.92)	07.02.2000	उत्तर और पश्चिम सिक्किम के भाग
13.	अगस्त्यमलाई (3500.36)	12.11.2001	केरल में अगस्त्यथीमलाई पहाड़ियाँ
14.	**अचनकमर-अमरकटंक (3835.51)**	30.03.2005	मध्य प्रदेश में अनुपुर और दिन दोरी जिलों के भाग और छत्तीसगढ़ में बिलासपुर जिले का भाग
15.	कच्छ (12,454)	29.01.2008	कच्छ का भाग, एवं गुजरात के राजकोट, सुंदर नगर तथा पाटन जिले
16.	ठंडा रेगिस्तान (7770)	28.08.2009	पिन वैली नेशनल पार्क एवं प्रतिवेश, चंद्रताल तथा सारचू; एवं किब्बर वन्य प्राणी अभयवन, हिमाचल प्रदेश
17.	शेष अचलम (4755.997)	20.09.2010	पूर्वी घाट में शेष अचलम की पहाड़ियाँ तथा आंध्र प्रदेश में चितूर तथा कड्डप्पा ज़िलों के भाग
18.	पन्ना (2998.98)	25.08.2011	मध्य प्रदेश में पन्ना एवं छत्तरपुर ज़िलों के भाग

* मोटे अक्षरों में लिखे क्षेत्रों को यूनेस्को के बी.आर. वर्ल्ड नेटवर्क में सम्मिलित किया गया है।

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2013-14, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार

यहाँ परिस्थितिक तंत्रों को मुख्य खतरा संकटापन्न पौध प्रजातियों को दवा के लिए इकट्ठा करना, दावानल और पशुओं का व्यापारिक उद्देश्य के लिए शिकार से है।

सुंदर वन जीव मंडल निचय

यह पश्चिम बंगाल में गंगा नदी के दलदली डेल्टा पर स्थित हैं। यह एक विशाल क्षेत्र (9,630 वर्ग किलोमीटर) पर फैला हुआ है और यहाँ मैंग्रोव वन, अनूप और वनाच्छादित द्वीप पाए जाते हैं। सुंदर वन लगभग 200 रॉयल बंगाल टाईगर का आवासीय क्षेत्र है।

मैंग्रोव वृक्षों की उलझी हुई विशाल जड़ समूह मछली से श्रिम्प तक को आश्रय प्रदान करती हैं। इन मैंग्रोव वनों में 170 से ज्यादा पक्षी प्रजातियाँ पाई जाती हैं।

स्वयं को लवणीय और ताजा जल पर्यावरण के अनुरूप ढालते हुए, बाघ पानी में तैरते हैं और चीतल, भौंकने वाले मृग (Barking deer), जंगली सूअर और यहाँ तक कि लंगूरों जैसे दुर्लभ शिकार भी कर लेते हैं। सुंदर वन के मैंग्रोव वनों में हेरिशिएरा फोमीज, जो बेशकीमती इमारती लकड़ी है, भी पाई जाती है।

मन्नार की खाड़ी का जीवमंडल निचय

मन्नार की खाड़ी का जीवमंडल निचय लगभग एक लाख पाँच हजार हैक्टेयर क्षेत्र में फैला है और भारत के दक्षिण-पूर्वी तट पर स्थित है। समुद्रीय जीव विविधता के मामले में यह क्षेत्र विश्व के सबसे धनी क्षेत्रों में से एक है। इस जीवमंडल निचय में 21 द्वीप हैं और इन पर अनेक ज्वारनदमुख, पुलिन, तटीय पर्यावरण के जंगल, समुद्री घासें, प्रवाल द्वीप, लवणीय अनूप और मैंग्रोव पाए जाते हैं। यहाँ पर लगभग 3,600 पौधों और जीवों की संकटापन्न प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जैसे - समुद्री गाय (Dugong dugon)। इसके अतिरिक्त भारतीय प्रायद्वीप क्षेत्रीय विशेष की 6 मैंग्रोव प्रजातियाँ भी संकटापन्न हैं।

अभ्यास

1. निम्नलिखित चार विकल्पों में से सही उत्तर चुनें :
   (i) चंदन वन किस तरह के वन के उदाहरण हैं-
   (क) सदाबहार वन (ख) डेल्टाई वन
   (ग) पर्णपाती वन (घ) काँटेदार वन
   (ii) प्रोजेक्ट टाईगर निम्नलिखित में से किस उद्देश्य से शुरू किया गया है-
   (क) बाघ मारने के लिए (ख) बाघ को शिकार से बचाने के लिए
   (ग) बाघ को चिड़ियाघर में डालने के लिए (घ) बाघ पर फिल्म बनाने के लिए
   (iii) नंदा देवी जीव मंडल निचय निम्नलिखित में से किस प्रांत में स्थित है-
   (क) बिहार (ख) उत्तराखण्ड
   (ग) उत्तर प्रदेश (घ) ओडिशा
   (iv) निम्नलिखित में से कितने भारत के जीव मंडल निचय यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त हैं?
   (क) एक (ख) दस
   (ग) दो (घ) चार
   (v) वन नीति के अनुसार वर्तमान में निम्नलिखित में से कितना प्रतिशत क्षेत्र, वनों के अधीन होना चाहिए?
   (क) 33 (ख) 55
   (ग) 44 (घ) 22

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दें।
   (i) प्राकृतिक वनस्पति क्या है? जलवायु की किन परिस्थितियों में उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन उगते हैं?
   (ii) जलवायु की कौन-सी परिस्थितियाँ सदाबहार वन उगने के लिए अनुकूल हैं?
   (iii) सामाजिक वानिकी से आपका क्या अभिप्राय है?
   (iv) जीवमंडल निचय को परिभाषित करें। वन क्षेत्र और वन आवरण में क्या अंतर है?

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 125 शब्दों में दें।
   (i) वन संरक्षण के लिए क्या कदम उठाए गए हैं?
   (ii) वन और वन्य जीव संरक्षण में लोगों की भागेदारी कैसे महत्त्वपूर्ण है?

परियोजना/क्रियाकलाप

भारत के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित को पहचान कर चिह्नित करें।

(i) मैंग्रोव वन वाले क्षेत्र।
(ii) नंदा देवी, सुंदर वन, मन्नार की खाड़ी और नीलगिरी जीव मंडल निचय।
(iii) भारतीय वन सर्वेक्षण मुख्यालय की स्थिति का पता लगाएँ और रेखांकित करें।

अध्याय

6

मृदा

क्या आपने कभी उस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारक के बारे में सोचा है जो धरातल पर वृक्षों, घास, फसलों तथा जीवन के अनेक रूपों का पोषण करता है? क्या कोई मिट्टी के बिना घास का एक तिनका भी उगा सकता है? यद्यपि जलीय प्रकृति के पौधे और प्राणी जल में जीवित रहते हैं परंतु क्या वे जल के द्वारा मिट्टी से पोषक तत्त्व ग्रहण नहीं करते? आप अनुभव कर सकते हैं कि मृदा भू-पर्पटी की सबसे महत्त्वपूर्ण परत है। यह एक मूल्यवान संसाधन है। हमारा अधिकतर भोजन और वस्त्र, मिट्टी में उगने वाली भूमि-आधारित फसलों से प्राप्त होता है। दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हम जिस मिट्टी पर निर्भर करते हैं उसका विकास हजारों वर्षों में होता है। अपक्षय और क्रमण के विभिन्न कारक जनक सामग्री पर कार्य करके मृदा की एक पतली परत का निर्माण करते हैं।

मृदा शैल, मलवा और जैव सामग्री का सम्मिश्रण होती है जो पृथ्वी की सतह पर विकसित होते हैं। मृदा-निर्माण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं- उच्चावच, जनक सामग्री, जलवायु, वनस्पति तथा अन्य जीव रूप और समय। इनके अतिरिक्त मानवीय क्रियाएँ भी पर्याप्त सीमा तक इसे प्रभावित करती हैं। मृदा के घटक खनिज कण, ह्यूमस, जल तथा वायु होते हैं। इनमें से प्रत्येक की वास्तविक मात्रा मृदा के प्रकार पर निर्भर करती है। कुछ मृदाओं में, इनमें से एक या अधिक घटक कम मात्रा में होता है जबकि अन्य कुछ मृदाओं में इन घटकों का संयोजन भिन्न प्रकार का पाया जाता है।

क्या आपने वन महोत्सव मनाते समय अपने स्कूल के मैदान में वृक्ष लगाने के लिए कभी गड्ढा खोदा है? क्या इस गड्ढे में मिट्टी की परतें समरूप थीं अथवा इस में शीर्ष से तली तक मृदा के रंग अलग-अलग थे?

यदि हम भूमि पर एक गड्ढा खोदें और मृदा को देखें तो वहाँ हमें मृदा की तीन परतें दिखाई देती हैं, जिन्हें संस्तर कहा जाता है। 'क' संस्तर सबसे ऊपरी खंड होता है, जहाँ पौधों की वृद्धि के लिए अनिवार्य जैव पदार्थों का खनिज पदार्थ, पोषक तत्त्वों तथा जल से संयोग होता है। 'ख' संस्तर 'क' संस्तर तथा 'ग' संस्तर के बीच संक्रमण खंड होता है जिसे नीचे व ऊपर दोनों से पदार्थ प्राप्त होते हैं। इसमें कुछ जैव पदार्थ होते हैं तथापि खनिज पदार्थ का अपक्षय स्पष्ट नजर आता है। 'ग' संस्तर की रचना ढीली जनक सामग्री से होता है। यह परत मृदा निर्माण की प्रक्रिया में प्रथम अवस्था होती है और अंततः ऊपर की दो परतें इसी से बनती हैं। परतों की इस व्यवस्था को मृदा परिच्छेदिका कहा जाता है। इन तीन संस्तरों के नीचे एक चट्टान होती है जिसे जनक चट्टान अथवा आधारी चट्टान कहा जाता है। मृदा, जिसका एक जटिल तथा भिन्न अस्तित्त्व है, सदैव मृदा वैज्ञानिकों को आकर्षित करती रही है। इसके महत्त्व को समझने के लिए आवश्यक है कि मृदा का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए। मृदा का वर्गीकरण इसी लक्ष्य को प्राप्त करने का एक प्रयास है।

मृदा का वर्गीकरण

भारत में भिन्न-भिन्न प्रकार के उच्चावच, भूआकृति, जलवायु परिमंडल तथा वनस्पतियाँ पाई जातीं हैं। इंहोंने भारत में अनेक प्रकार की मिट्टियों के विकास में योगदान दिया है।

प्राचीन काल में मृदा को दो मुख्य वर्गों में बाँटा जाता था– उर्वर, जो उपजाऊ थी और ऊसर, जो अनुर्वर थी। 16वीं शताब्दी में मृदा का वर्गीकरण उनकी सहज विशेषताओं तथा बाह्य लक्षणों, जैसे– गठन, रंग, भूमि का ढाल और मिट्टी में नमी की मात्रा के आधार पर किया गया था। गठन के आधार पर मृदाओं के मुख्य प्रकार थे– बलुई, मृण्मय, पांशु तथा दुमट इत्यादि। रंग के आधार पर वे लाल, पीली, काली इत्यादि थीं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अनेक संस्थानों द्वारा मृदा के वैज्ञानिक सर्वेक्षण किए गए। सन् 1956 में स्थापित भारत के मृदा सर्वेक्षण विभाग ने दामोदर घाटी जैसे कुछ चुने हुए क्षेत्रों में मृदाओं के व्यापक अध्यापन किए। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् (आई.सी.ए.आर.) के तत्त्वाधान में राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण ब्यूरो तथा भूमि–उपयोग आयोजन एवं संस्थान ने भारत की मृदाओं पर बहुत–से अध्ययन किए। मृदा के अध्ययन तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसे तुलनात्मक बनाने के प्रयासों के अंतर्गत आई.सी.ए.आर. ने भारतीय मृदाओं को उनकी प्रकृति और उन के गुणों के आधार पर वर्गीकृत किया है। यह वर्गीकरण संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग (यू.एस.डी.ए.) मृदा वर्गीकरण पद्धति पर आधारित है।

आई.सी.ए.आर. ने यू.एस.डी.ए. मृदा वर्गीकरण के अनुसार भारत की मिट्टियों को निम्नलिखित क्रम में वर्गीकृत किया है।

क्र. सं.	*क्रम*	*क्षेत्र (हजार हैक्टेयरों में)*	*प्रतिशत*
(i)	इंसेप्टीसोल्स	130372.90	39.74
(ii)	एंटीसोल्स	92131.71	28.08
(iii)	एल्फीसोल्स	44448.68	13.55
(iv)	वर्टीसोल्स	27960.00	8.52
(v)	एरीडीसोल्स	14069.00	4.28
(vi)	अल्टीसोल्स	8250.00	2.51
(vii)	मॉलीसोल्स	1320.00	0.40
(viii)	अन्य	9503.10	2.92
	योग		**100**

स्रोत : भारतीय मृदा, राष्ट्रीय भू-सर्वेक्षण एवं भू-उपयोग ब्यूरो, प्रकाशन संख्या–94

उत्पत्ति, रंग, संयोजन तथा अवस्थिति के आधार पर भारत की मिट्टियों को निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है:

(i) जलोढ़ मृदाएँ
(ii) काली मृदाएँ
(iii) लाल और पीली मृदाएँ
(iv) लैटेराइट मृदाएँ
(v) शुष्क मृदाएँ
(vi) लवण मृदाएँ
(vii) पीटमय मृदाएँ
(viii) वन मृदाएँ

जलोढ़ मृदाएँ

जलोढ़ मृदाएँ उत्तरी मैदान और नदी घाटियों के विस्तृत भागों में पाई जाती हैं। ये मृदाएँ देश के कुल क्षेत्रफल के

चित्र 6.1 : जलोढ़ मृदा

लगभग 40 प्रतिशत भाग को ढके हुए हैं। ये निक्षेपण मृदाएँ हैं जिन्हें नदियों और सरिताओं ने वाहित तथा निक्षेपित किया है। राजस्थान के एक संकीर्ण गलियारे से होती हुई ये मृदाएँ गुजरात के मैदान में फैली मिलती हैं। प्रायद्वीपीय प्रदेश में ये पूर्वी तट की नदियों के डेल्टाओं और नदियों की घाटियों में पाई जाती हैं।

जलोढ़ मृदाएँ गठन में बलुई दुमट से चिकनी मिट्टी की प्रकृति की पाई जाती हैं। सामान्यत: इनमें पोटाश की मात्रा अधिक और फ़ॉस्फोरस की मात्रा कम पाई जाती है। गंगा के ऊपरी और मध्यवर्ती मैदान में 'खादर' और 'बांगर' नाम की दो भिन्न मृदाएँ विकसित हुई हैं। खादर प्रतिवर्ष बाढ़ों के द्वारा निक्षेपित होने वाला नया जलोढ़क

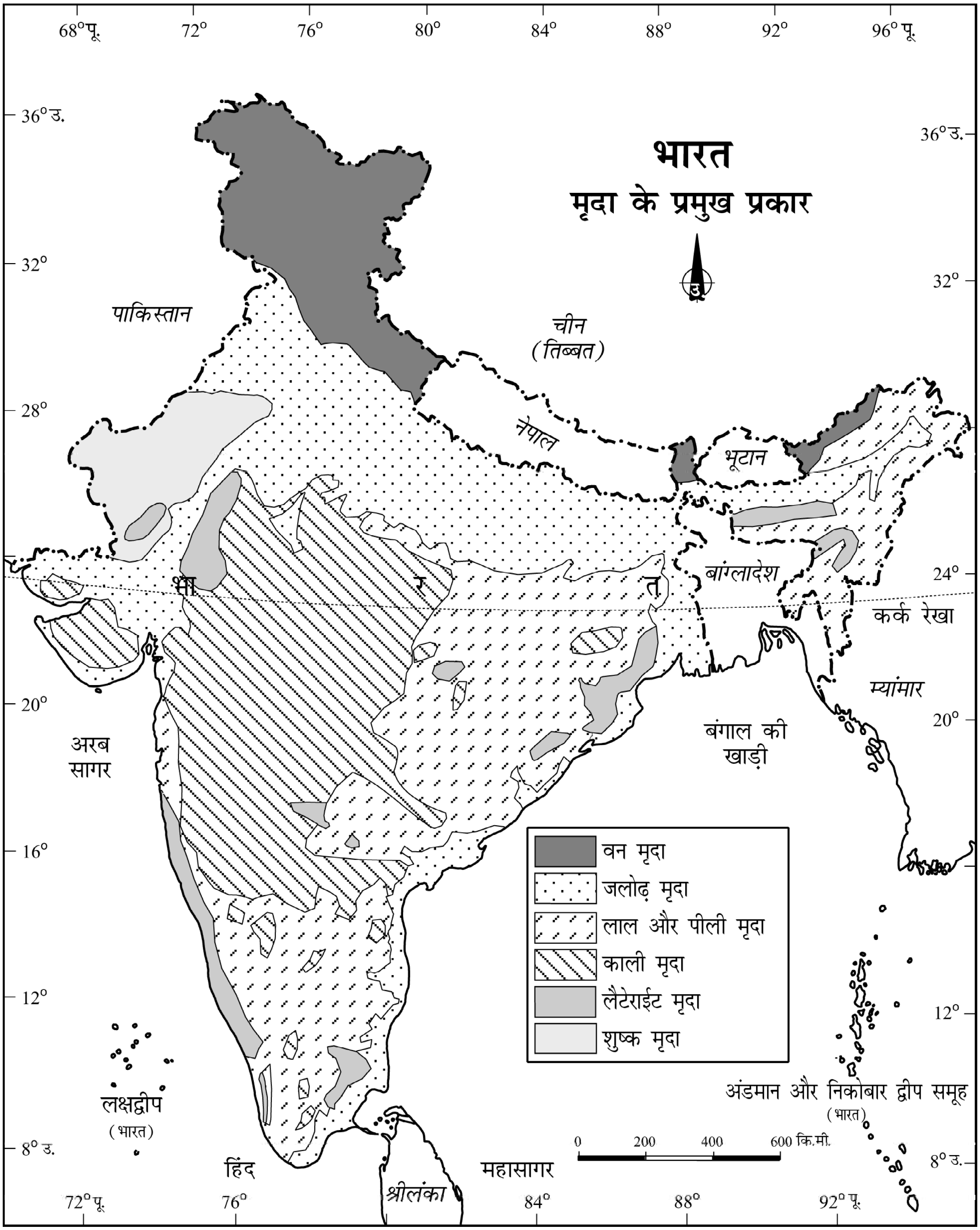

चित्र 6.2 : भारत : मृदा के प्रमुख प्रकार

है, जो महीन गाद होने के कारण मृदा की उर्वरता बढ़ा देता है। बांगर पुराना जलोढ़क होता है जिसका जमाव बाढ़कृत मैदानों से दूर होता है। खादर और बांगर मृदाओं में कैल्सियमी संग्रथन अर्थात् कंकड़ पाए जाते हैं। निम्न तथा मध्य गंगा के मैदान और ब्रह्मपुत्र घाटी में ये मृदाएँ अधिक दुमटी और मृण्मय हैं। पश्चिम से पूर्व की ओर इनमें बालू की मात्रा घटती जाती है।

जलोढ़ मृदाओं का रंग हल्के धूसर से राख धूसर जैसा होता है। इसका रंग निक्षेपण की गहराई, जलोढ़ के गठन और निर्माण में लगने वाली समयावधि पर निर्भर करता है। जलोढ़ मृदाओं पर गहन कृषि की जाती है।

काली मृदाएँ

काली मृदाएँ दक्कन के पठार के अधिकतर भाग पर पाई जाती हैं। इसमें महाराष्ट्र के कुछ भाग, गुजरात, आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु के कुछ भाग शामिल हैं। गोदावरी और कृष्णा नदियों के ऊपरी भागों और दक्कन के पठार के उत्तरी-पश्चिमी भाग में गहरी काली मृदा पाई जाती है। इन मृदाओं को 'रेगर' तथा 'कपास वाली काली मिट्टी' भी कहा जाता है। आमतौर पर काली मृदाएँ मृण्मय, गहरी और अपारगम्य होती हैं। ये मृदाएँ गीले होने पर फूल जाती हैं और चिपचिपी हो जाती हैं। सूखने पर ये सिकुड़ जाती हैं। इस प्रकार शुष्क ऋतु में इन मृदाओं में चौड़ी दरारें पड़ जाती हैं। इस समय ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे इनमें 'स्वतः जुताई' हो गई हो। नमी के धीमे अवशोषण और नमी के क्षय की इस विशेषता के कारण काली मृदा में एक लम्बी अवधि तक नमी बनी रहती है।

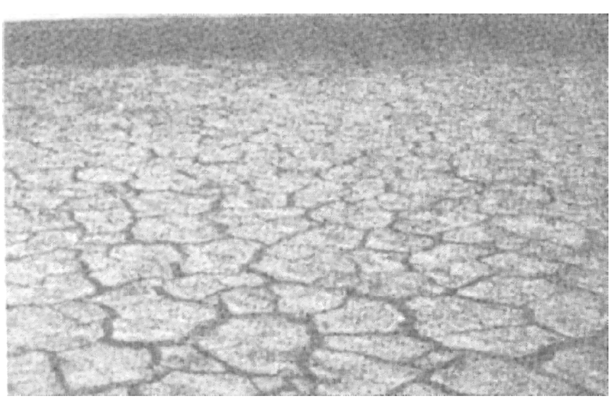

चित्र 6.3 : शुष्क ऋतु में काली मिट्टी

इसके कारण फसलों को, विशेष रूप से वर्षाधीन फसलों को, शुष्क ऋतु में भी नमी मिलती रहती है और वे फलती फूलती रहती हैं।

रासायनिक दृष्टि से काली मृदाओं में चूने, लौह, मैग्नीशिया तथा ऐलुमिना के तत्त्व काफी मात्रा में पाए जाते हैं। इनमें पोटाश की मात्रा भी पाई जाती है। लेकिन इनमें फ़ॉस्फोरस, नाइट्रोजन और जैव पदार्थों की कमी होती है। इस मृदा का रंग गाढ़े काले और स्लेटी रंग के बीच की विभिन्न आभाओं का होता है।

लाल और पीली मृदाएँ

लाल मृदा का विकास दक्कन के पठार के पूर्वी तथा दक्षिणी भाग में कम वर्षा वाले उन क्षेत्रों में हुआ है, जहाँ रवेदार आग्नेय चट्टानें पाई जाती हैं। पश्चिमी घाट के गिरिपद क्षेत्र की एक लंबी पट्टी में लाल दुमटी मृदा पाई जाती है। पीली और लाल मृदाएँ ओडिशा तथा छत्तीसगढ़ के कुछ भागों और मध्य गंगा के मैदान के दक्षिणी भागों में पाई जाती है। इस मृदा का लाल रंग रवेदार तथा कायांतरित चट्टानों में लोहे के व्यापक विसरण के कारण होता है। जलयोजित होने के कारण यह पीली दिखाई पड़ती है। महीने कणों वाली लाल और पीली मृदाएँ सामान्यतः उर्वर होती हैं। इसके विपरीत मोटे कणों वाली उच्च भूमियों की मृदाएँ अनुर्वर होती हैं। इनमें सामान्यतः नाइट्रोजन, फ़ॉस्फोरस और ह्यूमस की कमी होती है।

लैटेराइट मृदाएँ

लैटेराइट एक लैटिन शब्द 'लेटर' से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ ईंट होता है। लैटेराइट मृदाएँ उच्च तापमान और भारी वर्षा के क्षेत्रों में विकसित होती हैं। ये मृदाएँ उष्ण कटिबंधीय वर्षा के कारण हुए तीव्र निक्षालन का परिणाम हैं। वर्षा के साथ चूना और सिलिका तो निक्षालित हो जाते हैं तथा लोहे के ऑक्साइड और अल्यूमीनियम के यौगिक से भरपूर मृदाएँ शेष रह जाती हैं। उच्च तापमानों में आसानी से पनपने वाले जीवाणु ह्यूमस की मात्रा को तेजी से नष्ट कर देते हैं। इन मृदाओं में जैव पदार्थ, नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ेट और कैल्सियम की कमी होती

है तथा लौह–ऑक्साइड और पोटाश की अधिकता होती है। परिणामस्वरूप लैटेराइट मृदाएँ कृषि के लिए पर्याप्त उपजाऊ नहीं हैं। फसलों के लिए उपजाऊ बनाने के लिए इन मृदाओं में खाद और उर्वरकों की भारी मात्रा डालनी पड़ती है।

तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और केरल में काजू जैसे वृक्षों वाली फसलों की खेती के लिए लाल लैटेराइट मृदाएँ अधिक उपयुक्त हैं।

मकान बनाने के लिए लैटेराइट मृदाओं का प्रयोग ईंटें बनाने में किया जाता है। इन मृदाओं का विकास मुख्य रूप से प्रायद्वीपीय पठार के ऊँचे क्षेत्रों में हुआ है। लैटराइट मृदाएँ सामान्यत: कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश तथा ओडिशा और असम के पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

शुष्क मृदाएँ

शुष्क मृदाओं का रंग लाल से लेकर किशमिशी तक होता है। ये सामान्यत: संरचना से बलुई और प्रकृती से लवणीय होती हैं। कुछ क्षेत्रों की मृदाओं में नमक की मात्रा इतनी अधिक होती है कि इनके पानी को वाष्पीकृत करके नमक प्राप्त किया जाता है। शुष्क जलवायु, उच्च

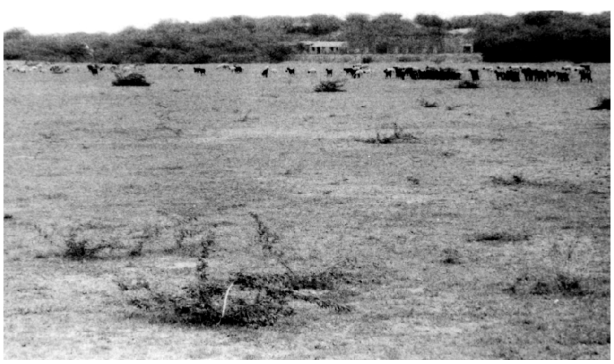

चित्र 6.4 : शुष्क मृदा

तापमान और तीव्रगति से वाष्पीकरण के कारण इन मृदाओं में नमी और ह्यूमस कम होते हैं। इनमें नाइट्रोजन अपर्याप्त और फ़ॉस्फ़ेट सामान्य मात्रा में होती है। नीचे की ओर चूने की मात्रा के बढ़ते जाने के कारण निचले संस्तरों में कंकड़ो की परतें पाई जाती हैं। मृदा के तली संस्तर में कंकड़ों की परत के बनने के कारण पानी का रिसाव सीमित हो जाता है। इसलिए सिंचाई किए जाने पर इन मृदाओं में पौधों की सतत् वृद्धि के लिए नमी सदा उपलब्ध रहती है। ये मृदाएँ विशिष्ट शुष्क स्थलाकृति वाले पश्चिमी राजस्थान में अभिलक्षणिक रूप से विकसित हुई हैं। ये मृदाएँ अनुर्वर हैं क्योंकि इनमें ह्यूमस और जैव पदार्थ कम मात्रा में पाए जाते हैं।

लवण मृदाएँ

ऐसी मृदाओं को ऊसर मृदाएँ भी कहते हैं। लवण मृदाओं में सोडियम, पौटेशियम और मैग्नीशियम का अनुपात अधिक होता है। अत: ये अनुर्वर होती हैं और इनमें किसी भी प्रकार की वनस्पति नहीं उगती। मुख्य रूप से शुष्क जलवायु और खराब अपवाह के कारण इनमें लवणों की मात्रा बढ़ती जाती है। ये मृदाएँ शुष्क और अर्ध–शुष्क तथा जलाक्रांत क्षेत्रों और अनूपों में पाई जाती हैं। इनकी संरचना बलुई से लेकर दुमटी तक होती है। इनमें नाइट्रोजन और चूने की कमी होती है। लवण मृदाओं का अधिकतर प्रसार पश्चिमी गुजरात, पूर्वी तट के डेल्टाओं और पश्चिमी बंगाल के सुंदर वन क्षेत्रों में है। कच्छ के रन में दक्षिणी–पश्चिमी मानसून के साथ नमक के कण आते हैं, जो एक पपड़ी के रूप में ऊपरी सतह पर जमा हो जाते हैं। डेल्टा प्रदेश में समुद्री जल के भर जाने से लवण मृदाओं के विकास को बढ़ावा मिलता है। अत्यधिक सिंचाई वाले गहन कृषि के क्षेत्रों में, विशेष रूप से हरित क्राँति वाले क्षेत्रों मे, उपजाऊ जलोढ़ मृदाएँ भी लवणीय होती जा रही हैं। शुष्क जलवायु वाली दशाओं में अत्यधिक सिंचाई केशिका क्रिया को बढ़ावा देती है। इसके परिणामस्वरूप नमक ऊपर की ओर बढ़ता है और मृदा की सबसे ऊपरी परत में नमक जमा हो जाता है। इस प्रकार के क्षेत्रों में, विशेष रूप में पंजाब और हरियाणा में मृदा की लवणता की समस्या से निबटने के लिए जिप्सम डालने की सलाह दी जाती है।

पीटमय मृदाएँ

ये मृदाएँ भारी वर्षा और उच्च आर्द्रता से युक्त उन क्षेत्रों में पाई जाती हैं जहाँ वनस्पति की वृद्धि अच्छी हो। अत: इन क्षेत्रों में मृत जैव पदार्थ बड़ी मात्रा में इकट्ठे हो जाते

हैं, जो मृदा को ह्यूमस और पर्याप्त मात्रा में जैव तत्त्व प्रदान करते हैं। इन मृदाओं में जैव पदार्थों की मात्रा 40 से 50 प्रतिशत तक होती है। ये मृदाएँ सामान्यतः गाढ़े और काले रंग की होती हैं। अनेक स्थानों पर ये क्षारीय भी हैं। ये मृदाएँ अधिकतर बिहार के उत्तरी भाग, उत्तराचंल के दक्षिणी भाग, पश्चिम बंगाल के तटीय क्षेत्रों, उड़ीसा और तमिलनाडु में पाई जाती हैं।

वन मृदाएँ

अपने नाम के अनुरूप ये मृदाएँ पर्याप्त वर्षा वाले वन क्षेत्रों में ही बनती हैं। इन मृदाओं का निर्माण पर्वतीय पर्यावरण में होता है। इस पर्यावरण में परिवर्तन के अनुसार मृदाओं का गठन और संरचना बदलती रहती हैं। घाटियों में ये दुमटी और पांशु होती हैं तथा ऊपरी ढालों पर ये मोटे कणों वाली होती हैं। हिमालय के हिमाच्छादित क्षेत्रों में इन मृदाओं का अनाच्छादन होता रहता है और ये अम्लीय और कम ह्यूमस वाली होती हैं। निचली घाटियों में पाई जाने वाली मृदाएँ उर्वर होती हैं।

ऊपर की गई चर्चा से स्पष्ट होता है कि मृदाएँ, उनका गठन, गुण व प्रकृति फसलों, पौधों और वनस्पति के अंकुरण एवं वृद्धि के लिए अति महत्त्वपूर्ण है। मृदाएँ जीवित तंत्र होती हैं। किसी भी अन्य प्राणी की तरह यह विकसित, क्षय तथा निम्नीकृत होती हैं। यदि समय पर उनका सही उपचार किया जाए तो उनमें सुधार भी होता है। मृदाएँ उस तंत्र के अन्य घटकों पर गहरा प्रभाव डालती हैं, जिसका वे स्वयं एक अंग हैं।

मृदा अवकर्षण

मोटे तौर पर मृदा अवकर्षण को मृदा की उर्वरता के ह्रास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसमें मृदा का पोषण स्तर गिर जाता है तथा अपरदन और दुरुपयोग के कारण मृदा की गहराई कम हो जाती है। भारत में मृदा संसाधनों के क्षय का मुख्य कारक मृदा अवकर्षण है। मृदा अवकर्षण की दर भूआकृति, पवनों की गति तथा वर्षा की मात्रा के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर भिन्न होती है।

मृदा अपरदन

मृदा के आवरण का विनाश, मृदा अपरदन कहलाता है। बहते जल और पवनों की अपरदनात्मक प्रक्रियाएँ तथा मृदा निर्माणकारी प्रक्रियाएँ साथ-साथ घटित हो रही होती हैं। सामान्यतः इन दोनों प्रक्रियाओं में एक संतुलन बना रहता है। धरातल से सूक्ष्म कणों के हटने की दर वही होती है जो मिट्टी की परत में कणों के जुड़ने की होती है।

कई बार प्राकृतिक अथवा मानवीय कारकों से यह संतुलन बिगड़ जाता है, जिससे मृदा के अपरदन की दर बढ़ जाती है। मृदा अपरदन के लिए मानवीय गतिविधियाँ भी काफी हद तक उत्तरदायी हैं। जनसंख्या बढ़ने के साथ भूमि की माँग भी बढ़ने लगती हैं। मानव बस्तियों, कृषि, पशुचारण तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वन तथा अन्य प्राकृतिक वनस्पति साफ कर दी जाती हैं।

मृदा को हटाने और उसका परिवहन कर सकने के गुण के कारण पवन और जल मृदा अपरदन के दो शक्तिशाली कारक हैं। पवन द्वारा अपरदन शुष्क और अर्ध-शुष्क प्रदेशों में महत्त्वपूर्ण होता है। भारी वर्षा और खड़ी ढालों वाले प्रदेशों में बहते जल द्वारा किया गया अपरदन महत्त्वपूर्ण होता है। जल-अपरदन अपेक्षाकृत अधिक गंभीर है और यह भारत के विस्तृत क्षेत्रों में हो रहा है। जल-अपरदन दो रूपों में होता है- परत अपरदन और अवनालिका अपरदन। परत अपरदन समतल भूमियों पर मूसलाधार वर्षा के बाद होता है और इसमें मृदा का

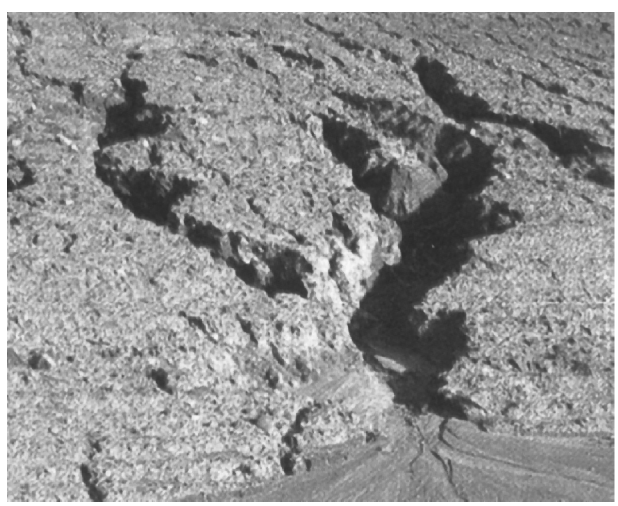

चित्र 6.5 : मृदा अपरदन

हटना आसानी से दिखाई भी नहीं देता, किंतु यह अधिक हानिकारक है क्योंकि इससे मिट्टी की सूक्ष्म और अधिक उर्वर ऊपरी परत हट जाती है। अवनालिका अपरदन सामान्यत: तीव्र ढालों पर होता है। वर्षा से गहरी हुई अवनालिकाएँ कृषि भूमियों को छोटे-छोटे टुकड़ों में खंडित कर देती हैं जिससे वे कृषि के लिए अनुपयुक्त हो जाती हैं। जिस प्रदेश में अवनालिकाएँ अथवा बीहड़ अधिक संख्या में होते हैं, उसे उत्खात भूमि स्थलाकृति कहा जाता है। चंबल नदी की द्रोणी में बीहड़ बहुत विस्तृत है। इसके अतिरिक्त ये तमिलनाडु और पश्चिमी बंगाल में भी पाए जाते हैं। देश की लगभग 8,000 हैक्टेयर भूमि प्रतिवर्ष बीहड़ में परिवर्तित हो जाती है। किस तरह के क्षेत्रों में अवनालिका अपरदन संभव है?

मृदा अपरदन भारतीय कृषि के लिए एक गंभीर समस्या बन गई है। इसके दुष्प्रभाव अन्य क्षेत्रों में भी दिखाई पड़ते हैं। नदी की घाटियों में अपरदित पदार्थों के जमा होने से उनकी जल प्रवाह क्षमता घट जाती है। इससे प्राय: बाढ़े आती हैं तथा कृषि-भूमि को क्षति पहुँचती है।

वनोन्मूलन, मृदा अपरदन के प्रमुख कारणों में से एक है। पौधों की जड़े मृदा को बाँधे रखकर अपरदन को रोकती हैं। पत्तियाँ और टहनियाँ गिराकर वे मृदा में ह्यूमस की मात्रा में वृद्धि करते हैं। वास्तव में संपूर्ण भारत में वनों का विनाश हुआ है लेकिन मृदा अपरदन पर उनका प्रभाव देश के पहाड़ी भागों में अधिक पड़ा है।

भारत के सिंचित क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि का काफी बड़ा भाग अति सिंचाई के प्रभाव से लवणीय होता जा रहा है। मृदा के निचले संस्तरों में जमा हुआ नमक धरातल के ऊपर आकर उर्वरता को नष्ट कर देता है। रासायनिक उर्वरक भी मृदा के लिए हानिकारक हैं। जब तक मृदा को पर्याप्त ह्यूमस नहीं मिलता, रसायन इसे कठोर बना देते हैं और दीर्घकाल में इसकी उर्वरता घट जाती है। यह समस्या नदी घाटी परियोजनाओं के उन सभी समादेशी क्षेत्रों (command area) में अधिक है, जो हरित-क्रांँति के आरंभिक लाभ भोगी थे। अनुमानों के अनुसार भारत की कुल भूमि का लगभग आधा भाग किसी न किसी मात्रा में अवकर्षण से प्रभावित है।

प्रति वर्ष भारत में अवकर्षण के कारक लाखों टन मृदा व उसके पोषक तत्त्वों का ह्रास करते हैं जिसका दुष्प्रभाव हमारी राष्ट्रीय उत्पादकता पर पड़ता है। इसलिए यह आवश्यक है कि मृदाओं के उद्धरण और संरक्षण के लिए तत्काल उपाय किए जाएँ।

मृदा संरक्षण

यदि मृदा अपरदन और मृदा क्षय मानव द्वारा किया जाता है, तो स्पष्टत: मानवों द्वारा इसे रोका भी जा सकता है। संतुलन बनाए रखने के प्रकृति के लिए अपने नियम हैं। बिना संतुलन बिगाड़े भी प्रकृति मानवों को अपनी अर्थव्यवस्था का विकास करने के पर्याप्त अवसर प्रदान करती है। मृदा संरक्षण एक विधि है, जिसमें मिट्टी की उर्वरता बनाए रखी जाती है, मिट्टी के अपरदन और क्षय को रोका जाता है और मिट्टी की निम्नीकृत दशाओं को सुधारा जाता है।

मृदा अपरदन मूल रूप से दोषपूर्ण पद्धतियों द्वारा बढ़ता है। किसी भी तर्कसंगत समाधान के अंतर्गत पहला काम ढालों की कृषि योग्य खुली भूमि पर खेती को रोकना है। 15 से 25 प्रतिशत ढाल प्रवणता वाली भूमि का उपयोग कृषि के लिए नहीं होना चाहिए। यदि ऐसी भूमि पर खेती करना जरूरी भी हो जाए तो इस पर सावधानी से सीढ़ीदार खेत बना लेने चाहिए। भारत के विभिन्न भागों में, अति चराई और स्थानांतरी कृषि ने भूमि के प्राकृतिक आवरण को दुष्प्रभावित किया है, जिससे विस्तृत क्षेत्र अपरदन की चपेट में आ गए हैं। ग्रामवासियों को इनके दुष्परिणामों से अवगत करवा कर इन्हें

चित्र 6.6 : सीढ़ीदार कृषि

(अति चराई और स्थानांतरी कृषि) नियमित और नियंत्रित करना चाहिए। समोच्च रेखा के अनुसार मेढ़बंदी, समोच्च रेखीय सीढ़ीदार खेत बनाना, नियमित वानिकी, नियंत्रित चराई, आवरण फसलें उगाना, मिश्रित खेती तथा शस्यावर्तन आदि उपचार के कुछ ऐसे तरीके हैं जिनका उपयोग मृदा अपरदन को कम करने के लिए प्रायः किया जाता है।

अवनालिका अपरदन को रोकने तथा उनके बनने पर नियंत्रण के प्रयत्न किए जाने चाहिए। अगुंल्याकार अवनालिकाओं को सीढ़ीदार खेत बनाकर समाप्त किया जा सकता है। बड़ी अवनालिकाओं में जल की अपरदनात्मक तीव्रता को कम करने के लिए रोक बाँधों की एक शृंखला बनानी चाहिए। अवनालिकाओं के शीर्ष की ओर फैलाव को नियंत्रित करने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। यह कार्य अवनालिकाओं को बंद करके, सीढ़ीदार खेत बनाकर अथवा आवरण वनस्पति का रोपण करके किया जा सकता है।

शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि पर बालू के टीलों के प्रसार को वृक्षों की रक्षक मेखला बनाकर तथा वन्य-कृषि करके रोकने के प्रयास करने चाहिए। कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि को चरागाहों में बदल देना चाहिए। केंद्रीय शुष्क भूमि अनुसंधान संस्थान (सीएजेडआरआई) ने पश्चिमी राजस्थान में बालू के टीलों को स्थिर करने के प्रयोग किए हैं।

भारत सरकार द्वारा स्थापित केंद्रीय मृदा संरक्षण बोर्ड ने देश के विभिन्न भागों में मृदा संरक्षण के लिए अनेक योजनाएँ बनाई हैं। ये योजनाएँ जलवायु की दशाओं, भूमि संरूपण तथा लोगों के सामाजिक व्यवहार पर आधारित हैं। ये योजनाएँ भी एक-दूसरे से तालमेल बनाए बिना ही चलाई गई हैं। अतः मृदा संरक्षण का सर्वोत्तम उपाय भूमि उपयोग की समन्वित योजनाएँ ही हो सकती हैं। भूमि का उनकी क्षमता के अनुसार ही वर्गीकरण होना चाहिए। भूमि उपयोग के मानचित्र बनाए जाने चाहिए और भूमि का सर्वथा सही उपयोग किया जाना चाहिए। मृदा संरक्षण का निर्णायक दायित्व उन लोगों पर है, जो उसका उपयोग करते हैं और उससे लाभ उठाते हैं।

अभ्यास

1. नीचे दिए गए चार विकल्पों में से सही उत्तर को चुनिए:

   (i) मृदा का सर्वाधिक व्यापक ओर सर्वाधिक उपजाऊ प्रकार कौन-सा है?
   (क) जलोढ़ मृदा (ख) काली मृदा
   (ग) लैटेराइट मृदा (घ) वन मृदा

   (ii) रेगर मृदा का दूसरा नाम है-
   (क) लवण मृदा (ख) शुष्क मृदा
   (ग) काली मृदा (घ) लैटेराइट मृदा

   (iii) भारत में मृदा के ऊपरी पर्त ह्रास का मुख्य कारण है-
   (क) वायु अपरदन (ख) अत्यधिक निक्षालन
   (ग) जल अपरदन (घ) इनमें से कोई नहीं

   (iv) भारत के सिंचित क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि निम्नलिखित में से किस कारण से लवणीय हो रही है-
   (क) जिप्सम की बढ़ोत्तरी (ख) अति सिंचाई
   (ग) अति चारण (घ) रासायनिक खादों का उपयोग

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए।

   (i) मृदा क्या है?

   (ii) मृदा निर्माण के प्रमुख उत्तरदायी कारक कौन-से हैं?

   (iii) मृदा परिच्छेदिका के तीन संस्तरों के नामों का उल्लेख कीजिए।

(iv) मृदा अवकर्षण क्या होता है?

(v) खादर और बांगर में क्या अंतर है?

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 125 शब्दों तक में दीजिए।

(i) काली मृदाएँ किन्हें कहते हैं? इनके निर्माण तथा विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(ii) मृदा संरक्षण क्या होता है? मृदा संरक्षण के कुछ उपाय सुझाइए।

(iii) आप यह कैसे जानेंगे कि कोई मृदा उर्वर है या नहीं? प्राकृतिक रूप से निर्धारित उर्वरता और मानवकृत उर्वरता में अंतर स्पष्ट कीजिए।

परियोजना/क्रियाकलाप

1. अपने क्षेत्र से मृदा के विभिन्न नमूने एकत्रित कीजिए तथा मृदा के प्रकारों पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

2. भारत के रेखा मानचित्र पर मृदा के निम्नलिखित प्रकारों से ढके क्षेत्रों को चिह्नित कीजिए।

(i) लाल मृदा

(ii) लैटेराइट मृदा

(iii) जलोढ़ मृदा

खंड
IV

प्राकृतिक संकट तथा आपदाएँ : कारण, परिणाम तथा प्रबंध

यह इकाई संबंधित है :

- *बाढ़ तथा सूखा;*
- *भूकंप तथा सुनामी;*
- *चक्रवात;*
- *भू-स्खलन*

अध्याय

7

प्राकृतिक संकट तथा आपदाएँ

आपने सुनामी के बारे में पढ़ा होगा या उसके प्रकोप की तस्वीरें टेलीविजन पर देखीं होंगी। आपको कश्मीर में नियंत्रण रेखा के दोनों तरफ आए भयावह भूकंप की जानकारी भी होगी। इन आपदाओं से होने वाले जान और माल के नुकसान ने हमें हिला कर रख दिया था। ये परिघटनाओं के रूप में क्या हैं और कैसे घटती हैं? हम इनसे अपने आपको कैसे बचा सकते हैं? ये कुछ सवाल हैं, जो हमारे दिमाग में आते हैं। इस अध्याय में हम इन्हीं सवालों का विश्लेषण करने की कोशिश करेंगे।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। यह एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है, जो विभिन्न तत्त्वों में, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, पदार्थ हो या अपदार्थ, अनवरत चलती रहती है तथा हमारे प्राकृतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रभावित करती है। यह प्रक्रिया हर जगह व्याप्त है परंतु इसके परिमाण, सघनता और पैमाने में अंतर होता है। ये बदलाव धीमी गति से भी आ सकते हैं, जैसे- स्थलाकृतियों और जीवों में। ये बदलाव तेज गति से भी आ सकते हैं, जैसे- ज्वालामुखी विस्फोट, सुनामी, भूकंप और तूफान इत्यादि। इसी प्रकार इसका प्रभाव छोटे क्षेत्र तक सीमित हो सकता है, जैसे- आँधी, करकापात और टॉरनेडो और इतना व्यापक हो सकता है, जैसे- भूमंडलीय उष्णीकरण और ओजोन परत का ह्रास।

इसके अतिरिक्त परिवर्तन का विभिन्न लोगों के लिए भिन्न-भिन्न अर्थ होता है। यह इनको समझने की कोशिश करने वाले व्यक्ति के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। प्रकृति के दृष्टिकोण से परिवर्तन मूल्य-तटस्थ होता है, (न अच्छा होता है, और न बुरा)। परंतु मानव दृष्टिकोण से परिवर्तन मूल्य बोझिल होता है। कुछ परिवर्तन अपेक्षित और अच्छे होते हैं, जैसे- ऋतुओं में परिवर्तन, फलों का पकना आदि जबकि कुछ परिवर्तन अनपेक्षित और बुरे होते हैं, जैसे- भूकंप, बाढ़ और युद्ध।

> आप अपने पर्यावरण का प्रेक्षण करें और उन परिवर्तनों की सूची तैयार करें जो दीर्घकालीन हैं और उनकी भी जो अल्पकालीन हैं। क्या आप जानते हैं कि क्यों कुछ बदलाव अच्छे समझे जाते हैं और दूसरे बुरे? उन बदलावों की सूची बनाएँ, जो आप हर रोज अनुभव करते हैं? कारण बताएँ कि क्यों इनमें से कुछ अच्छे और दूसरे बुरे माने जाते हैं।

इस अध्याय में हम कुछ ऐसे परिवर्तनों को समझने की कोशिश करेंगे जो बुरे माने जाते हैं और जो बहुत लंबे समय से मानव को भयभीत किए हुए हैं।

सामान्यत: आपदा और विशेष रूप से प्राकृतिक आपदाओं से मानव हमेशा भयभीत रहा है।

> **आपदा क्या है?**
> आपदा प्राय: एक अनपेक्षित घटना होती है, जो ऐसी ताकतों द्वारा घटित होती है, जो मानव के नियंत्रण में नहीं हैं। यह थोड़े समय में और बिना चेतावनी के घटित होती है जिसकी वजह से मानव जीवन के क्रियाकलाप अवरुद्ध होते हैं तथा बड़े पैमाने पर जानमाल का नुकसान होता है। अत: इससे निपटने के लिए हमें सामान्यत: दी जाने वाली वैधानिक आपातकालीन सेवाओं की अपेक्षा अधिक प्रयत्न करने पड़ते हैं।

लंबे समय तक भौगोलिक साहित्य में आपदाओं को प्राकृतिक बलों का परिणाम माना जाता रहा और मानव को इनका अबोध एवं असहाय शिकार। परंतु प्राकृतिक

बल ही आपदाओं के एकमात्र कारक नहीं हैं। आपदाओं की उत्पत्ति का संबंध मानव क्रियाकलापों से भी है। कुछ मानवीय गतिविधियाँ तो सीधे रूप से इन आपदाओं के लिए उत्तरदायी हैं। भोपाल गैस त्रासदी, चेरनोबिल नाभिकीय आपदा, युद्ध, सी एफ सी (क्लोरोफलोरो कार्बन) गैसें वायुमंडल में छोड़ना तथा ग्रीन हाउस गैसें, ध्वनि, वायु, जल तथा मिट्टी संबंधी पर्यावरण प्रदूषण आदि आपदाएँ इसके उदाहरण हैं। कुछ मानवीय गतिविधियाँ परोक्ष रूप से भी आपदाओं को बढ़ावा देती हैं। वनों को काटने की वजह से भू-स्खलन और बाढ़, भंगुर जमीन पर निर्माण कार्य और अवैज्ञानिक भूमि उपयोग कुछ उदाहरण हैं जिनकी वजह से आपदा परोक्ष रूप में प्रभावित होती है। क्या आप अपने पड़ोस या विद्यालय के आस-पास चल रही गतिविधियों की पहचान कर सकते हैं जिनकी वजह से भविष्य में आपदाएँ आ सकती हैं? क्या आप इनसे बचाव के लिए सुझाव दे सकते हैं? यह सर्वमान्य है कि पिछले कुछ सालों से मानवकृत आपदाओं की संख्या और परिमाण, दोनों में ही वृद्धि हुई है और कई स्तर पर ऐसी घटनाओं से बचने के भरसक प्रयत्न किए जा रहे हैं। यद्यपि इस संदर्भ में अब तक सफलता नाम मात्र ही हाथ लगी है, परंतु इन मानवकृत आपदाओं में से कुछ का निवारण संभव है। इसके विपरीत प्राकृतिक आपदाओं पर रोक लगाने की संभावना बहुत कम है इसलिए सबसे अच्छा तरीका है इनके असर को कम करना और इनका प्रबंध करना। इस दिशा में विभिन्न स्तरों पर कई प्रकार के ठोस कदम उठाए गए हैं जिनमें भारतीय राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान की स्थापना, 1993 में रियो डि जनेरो, ब्राजील में भू-शिखर सम्मेलन (Earth Summit) और मई 1994 में यॉकोहामा, जापान में आपदा प्रबंध पर विश्व संगोष्ठी आदि, विभिन्न स्तरों पर इस दिशा में उठाए जाने वाले ठोस कदम हैं।

प्राय: यह देखा गया है कि विद्वान आपदा और प्राकृतिक संकट शब्दों का इस्तेमाल एक-दूसरे की जगह कर लेते हैं। ये दोनों एक-दूसरे से संबंधित हैं परंतु फिर भी इनमें अंतर है। इसलिए इन दोनों में भेद करना आवश्यक है।

प्राकृतिक संकट, प्राकृतिक पर्यावरण में हालात के वे तत्त्व हैं जिनसे धन-जन या दोनों को नुकसान पहुँचने की संभाव्यता होती है। ये बहुत तीव्र हो सकते हैं या पर्यावरण विशेष के स्थायी पक्ष भी हो सकते हैं, जैसे- महासागरीय धाराएँ, हिमालय में तीव्र ढाल तथा अस्थिर संरचनात्मक आकृतियाँ अथवा रेगिस्तानों तथा हिमाच्छादित क्षेत्रों में विषम जलवायु दशाएँ आदि।

प्राकृतिक संकट की तुलना में प्राकृतिक आपदाएँ अपेक्षाकृत तीव्रता से घटित होती हैं तथा बड़े पैमाने पर जन-धन की हानि तथा सामाजिक तंत्र एवं जीवन को छिन्न-भिन्न कर देती हैं तथा उन पर लोगों का बहुत कम या कुछ भी नियंत्रण नहीं होता।

सामान्यत: प्राकृतिक आपदाएँ संसार भर के लोगों के व्यापकीकृत (generalised) अनुभव होते हैं और दो आपदाएँ न तो समान होती हैं और न उनमें आपस में तुलना की जा सकती है। प्रत्येक आपदा, अपने नियंत्रणकारी सामाजिक-पर्यावरणीय घटकों, सामाजिक अनुक्रिया, जो यह उत्पन्न करते हैं तथा जिस ढंग से प्रत्येक सामाजिक वर्ग इससे निपटता है, अद्वितीय होती है। ऊपर व्यक्त विचार तीन महत्त्वपूर्ण चीजों को इंगित करता है। पहला, प्राकृतिक आपदा के परिमाण, गहनता एवं बारंबारता तथा इसके द्वारा किए गए नुकसान समयांतर पर बढ़ते जा रहे हैं। दूसरे, संसार के लोगों में इन आपदाओं द्वारा पैदा किए हुए भय के प्रति चिंता बढ़ रही है तथा इनसे जान-माल की क्षति को कम करने का रास्ता ढूँढने का प्रयत्न कर रहे हैं और अंतत: प्राकृतिक आपदा के प्रारूप में समयांतर पर महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया है।

प्राकृतिक आपदाओं एवं संकटों के अवगम में परिवर्तन भी आया है। पहले प्राकृतिक आपदाएँ एवं संकट, दो परस्पर अंतर्संबंधी परिघटनाएँ समझी जाती थी अर्थात् जिन क्षेत्रों में प्राकृतिक संकट आते थे, वे आपदाओं के द्वारा भी सुभेद्य थे। अत: उस समय मानव पारिस्थितिक तंत्र के साथ ज़्यादा छेड़छाड़ नहीं करता था। इसलिए इन आपदाओं से नुकसान कम होता था। तकनीकी विकास ने मानव को, पर्यावरण को प्रभावित करने की बहुत क्षमता प्रदान कर दी है। परिणामत: मनुष्य ने आपदा के खतरे वाले क्षेत्रों में गहन क्रियाकलाप शुरू कर दिया है और इस प्रकार आपदाओं की सुभेद्यता को बढ़ा दिया है। अधिकांश नदियों के बाढ़-मैदानों में भू-उपयोग

तथा भूमि की कीमतों के कारण तथा तटों पर बड़े नगरों एवं बंदरगाहों, जैसे– मुंबई तथा चेन्नई आदि के विकास ने इन क्षेत्रों को चक्रवातों, प्रभंजनों तथा सुनामी आदि के लिए सुभेद्य बना दिया है।

इन प्रेक्षणों की पुष्टि सारणी 7.1 में दिए गए आँकड़ों से भी हो सकती है, जो पिछले 60 वर्षों में 12 गंभीर प्राकृतिक आपदाओं से विभिन्न देशों में मरने वालों के परिमाण दर्शाता है।

यह सारणी से स्पष्ट है कि प्राकृतिक आपदाओं ने विस्तृत रूप से जन एवं धन की हानि की है। इस स्थिति से निपटने के लिए भरसक प्रयत्न किए जा रहे हैं। यह भी महसूस किया जा रहा है प्राकृतिक आपदा द्वारा पहुँचाई गई क्षति के परिणाम भू–मंडलीय प्रतिघात है और अकेले किसी राष्ट्र में इतनी क्षमता नहीं है कि वह इन्हें सहन कर पाए। अतः 1989 में संयुक्त राष्ट्र सामान्य असेंबली में इस मुद्दे को उठाया गया था और मई 1994 में जापान के यॉकोहामा नगर में आपदा प्रबंधन की विश्व कांफ्रेंस में इसे औपचारिकता प्रदान कर दी गई और यही बाद में 'यॉकोहामा रणनीति तथा अधिक सुरक्षित संसार के लिए कार्य योजना' कहा गया।

प्राकृतिक आपदाओं का वर्गीकरण

विश्व भर में लोग विभिन्न प्रकार की आपदाओं को अनुभव करते हैं और उनका सामना करते हुए इन्हें सहन करते हैं। अब लोग इसके बारे में जागरूक हैं और इससे होने वाले नुकसान को कम करने की चेष्टा में कार्यरत हैं। इनके प्रभाव को कम करने के लिए विभिन्न स्तरों पर विभिन्न कदम उठाए जा रहे हैं। प्राकृतिक आपदाओं

सारणी 7.1 : 1948 से अब तक की प्रमुख प्राकृतिक आपदाएँ

वर्ष	*स्थान*	*प्रकार*	*मृत्यु*
1948	सोवियत संघ (अब रूस)	भूकंप	110,000
1949	चीन	बाढ़	57,000
1954	चीन	बाढ़	30,000
1965	पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश)	उष्ण कटिबंधीय चक्रवात	36,000
1968	ईरान	भूकंप	30,000
1970	पेरू	भूकंप	66,794
1970	पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश)	उष्ण कटिबंधीय चक्रवात	500,000
1971	भारत	उष्ण कटिबंधीय चक्रवात	30,000
1976	चीन	भूकंप	700,000
1990	ईरान	भूकंप	50,000
2004	इंडोनेशिया, श्रीलंका, भारत आदि	सुनामी	500,000 *
2005	पाकिस्तान, भारत	भूकंप	70,000 *
2011	जापान	सुनामी	15,842 *

स्रोत : यूनाईटेड नेशन्स इनवायरमेंटल प्रोग्राम (यू.एन.इ.पी.), 1991

* राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान की न्यूज़ रिपोर्ट, भारत सरकार, नई दिल्ली।

सारणी 7.2 : प्राकृतिक आपदाओं का वर्गीकरण

वायुमंडलीय	*भौमिक*	*जलीय*	*जैविक*
बर्फानी तूफान तड़ितझंझा तड़ित टॉरनेडो उष्ण कटिबंधीय चक्रवात सूखा करकापात पाला, लू, शीतलहर	भूकंप ज्वालामुखी भू-स्खलन हिमघाव अवतलन मृदा अपरदन	बाढ़ ज्वार महासागरीय धाराएँ तूफान महोर्मि सुनामी	पौधे व जानवर उपनिवेशक के रूप में (टिड्डीयाँ इत्यादि)। कीट ग्रसन–फफूंद, बैक्टीरिया और वायरल संक्रमण बर्ड फ्लू, डेंगू इत्यादि।

प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण का अंतर्राष्ट्रीय दशक
यॉकोहामा रणनीति तथा सुरक्षित संसार के लिए कार्य योजना

संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य देश तथा अन्य देशों की एक बैठक 'प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण' विश्व कांफ्रेंस 23 से 27 मई 1994 को यॉकोहामा नगर में हुई। इस बैठक में यह स्वीकार किया गया कि पिछले कुछ वर्षों में प्राकृतिक आपदाओं के कारण मानव जीवन तथा आर्थिक क्षति अधिक हुई है तथा समाज, सामान्यत: प्राकृतिक आपदाओं के लिए सुभेद्य हो गया है। यह भी स्वीकार किया गया कि ये आपदाएँ विशेषत: विकासशील देशों के गरीबों एवं साधनहीन समुदायों को अधिक प्रभावित करती हैं क्योंकि ये देश इनका मुकाबला करने के लिए तैयार नहीं हैं। इसलिए इस बैठक में एक दशक तथा उसके बाद भी इन आपदाओं से होने वाली क्षति को कम करने की रणनीति यॉकोहामा रणनीति के नाम से अपनाई गई।

विश्व बैठक में प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण के लिए पारित प्रस्ताव निम्नलिखित हैं:-

(i) यह दर्ज होगा कि हर देश की प्रमुख ज़िम्मेदारी है कि वे प्राकृतिक आपदा से अपने नागरिकों की रक्षा करे।
(ii) यह विकासशील देशों, विशेष रूप से, सबसे कम विकसित एवं चारों ओर से भू-बृद्ध देशों तथा छोटे द्वीपीय विकासशील देशों पर आग्रतापूर्वक ध्यान देगा।
(iii) जहाँ भी ठीक समझा जायेगा, वहाँ आपदा से बचाव, निवारण एवं तैयारी के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कानून बना कर क्षमता एवं सामर्थ्य का विकास करेगा तथा इस कार्य में स्वैच्छिक संगठनों तथा स्थानीय समुदायों को संगठित किया जाना चाहिए।
(iv) यह उप-क्षेत्रीय, क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग द्वारा उन कार्यों को बढ़ावा तथा मजबूती देगा जिनसे प्राकृतिक तथा दूसरी आपदाओं को रोका अथवा कम किया जा सके या उसका निवारण किया जा सके। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित पर विशेष बल दिया जाएगा-
(क) मानव तथा संस्थागत क्षमता निर्माण तथा सशक्तिकरण;
(ख) तकनीकों में भागीदारी: सूचना का एकत्रण, प्रकीर्णन (dissemination) तथा उपयोग और;
(ग) संसाधनों का संग्रह करना।

1999-2000 को आपदा न्यूनीकरण का अंतर्राष्ट्रीय दशक भी घोषित किया गया।

से, दक्षता से निपटने के लिए उनकी पहचान एवं वर्गीकरण को एक प्रभावशाली तथा वैज्ञानिक कदम समझा जा रहा है। प्राकृतिक आपदा को मोटे तौर पर चार प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है (सारणी 7.2)।

भारत उन देशों में है, जहाँ सारणी 7.2 में दी गई सभी प्राकृतिक आपदाएँ घटित हो चुकी हैं। इन आपदाओं की वजह से भारत में हर वर्ष हजारों लोगों की जान जाती है और करोड़ों रुपये का माली नुकसान होता है। आगे भारत में सबसे नुकसानदायक प्राकृतिक आपदाओं का वर्णन किया गया है।

भारत में प्राकृतिक आपदाएँ

जैसाकि पहले के अध्यायों में वर्णन किया गया है, भारत एक प्राकृतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं वाला देश है। बृहत भौगोलिक आकार, पर्यावरणीय विविधताओं और सांस्कृतिक बहुलता के कारण भारत को 'भारतीय उपमहाद्वीप' और 'अनेकता में एकता वाली धरती' के नाम से जाना जाता है। बृहत आकार, प्राकृतिक परिस्थितियों में विभिन्नता, लंबे समय तक उपनिवेशन, अभी भी जारी सामाजिक भेदमूलन तथा बहुत अधिक जनसंख्या के कारण भारत की प्राकृतिक आपदाओं द्वारा सुभेद्यता (vulnerability) को बढ़ा दिया है। इन प्रेक्षणों को भारत की कुछ मुख्य प्राकृतिक आपदाओं के वर्णन द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

भूकंप

भूकंप सबसे ज्यादा अपूर्वसूचनीय और विध्वंसक प्राकृतिक आपदा है। आपने पहले ही अपनी पुस्तक 'प्राकृतिक भूगोल के सिद्धांत, रा.शै.अ.प्र.प., 2006' में भूकंपों के कारण के बारे में पढ़ा है। भूकंपों की उत्पत्ति विवर्तनिकी से संबंधित है। ये विध्वंसक है और विस्तृत क्षेत्र को प्रभावित करते हैं। भूकंप पृथ्वी की ऊपरी सतह में विवर्तनिक गतिविधियों से निकली ऊर्जा से पैदा होते हैं। इसकी तुलना में ज्वालामुखी विस्फोट, चट्टान गिरने, भू-स्खलन, जमीन के अवतलन (धँसने) (विशेषकर खदानों वाले क्षेत्र में), बाँध व जलाशयों के बैठने इत्यादि

से आने वाला भूकंप कम क्षेत्र को प्रभावित करता है और नुकसान भी कम पहुँचाता है।

जैसाकि इस पुस्तक के अध्याय-2 में पहले भी वर्णन किया गया है, इंडियन प्लेट प्रति वर्ष उत्तर व उत्तर-पूर्व दिशा में एक सेंटीमीटर खिसक रही है। परंतु उत्तर में स्थित यूरेशियन प्लेट इसके लिए अवरोध पैदा करती है। परिणामस्वरूप इन प्लेटों के किनारे लॉक हो जाते हैं और कई स्थानों पर लगातार ऊर्जा संग्रह होता रहता है। अधिक मात्रा में ऊर्जा संग्रह से तनाव बढ़ता रहता है और दोनों प्लेटों के बीच लॉक टूट जाता है और एकाएक ऊर्जा मोचन से हिमालय के चाप के साथ भूकंप आ जाता है। इससे प्रभावित मुख्य राज्यों में जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, सिक्किम, पश्चिम बंगाल का दार्जिलिंग उपमंडल तथा उत्तर-पूर्व के सात राज्य शामिल हैं।

चित्र 7.1 : भूकंप द्वारा क्षतिग्रस्त एक भवन

इन क्षेत्रों के अतिरिक्त, मध्य-पश्चिमी क्षेत्र, विशेषकर गुजरात (1819, 1956 और 2001) और महाराष्ट्र (1967 और 1993) में कुछ प्रचंड भूकंप आए हैं। लंबे समय तक भूवैज्ञानिक प्रायद्वीपीय पठार, जो कि सबसे पुराना, स्थिर और प्रौढ़ भूभाग है, पर आए इन भूकंपों की व्याख्या करने में कठिनाई महसूस करते हैं। कुछ समय पहले भूवैज्ञानिकों ने एक नया सिद्धांत प्रतिपादित किया है जिसके अनुसार लातूर और ओसमानाबाद (महाराष्ट्र) के नजदीक भीमा (कृष्णा) नदी के साथ-साथ एक भ्रंश रेखा विकसित हुई है। इसके साथ ऊर्जा संग्रह होता है तथा इसकी विमुक्ति भूकंप का कारण बनती है। इस सिद्धांत के अनुसार संभवतः इंडियन प्लेट टूट रही है।

राष्ट्रीय भूभौतिकी प्रयोगशाला, भारतीय भूगर्भीय सर्वेक्षण, मौसम विज्ञान विभाग, भारत सरकार और इनके साथ कुछ समय पूर्व बने राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान ने भारत में आए 1200 भूकंपों का गहन विश्लेषण किया और भारत को निम्नलिखित पाँच भूकंपीय क्षेत्रों (zones) में बाँटा है।

(i) अति अधिक क्षति जोखिम क्षेत्र
(ii) अधिक क्षति जोखिम क्षेत्र
(iii) मध्यम क्षति जोखिम क्षेत्र
(iv) निम्न क्षति जोखिम क्षेत्र
(v) अति निम्न क्षति जोखिम क्षेत्र

इनमें से पहले दो क्षेत्रों में भारत के सबसे प्रचंड भूकंप अनुभव किए गए हैं। जैसाकि मानचित्र 7.2 में दिखाया गया है, भूकंप सुभेद्य क्षेत्रों में उत्तरी-पूर्वी प्रांत, दरभंगा से उत्तर में स्थित क्षेत्र तथा अरेरिया (बिहार में भारत-नेपाल सीमा के साथ), उत्तराखण्ड, पश्चिमी हिमाचल प्रदेश (धर्मशाला के चारों ओर), कश्मीर घाटी और कच्छ (गुजरात) शामिल हैं। ये अति अधिक क्षति जोखिम क्षेत्र का हिस्सा है। कश्मीर और हिमाचल प्रदेश के बचे हुए भाग, उत्तरी पंजाब, हरियाणा का पूर्वी भाग, दिल्ली, पश्चिम उत्तर प्रदेश और उत्तर बिहार अधिक क्षति जोखिम क्षेत्र में आते हैं। देश के बचे हुए भाग मध्य तथा निम्न क्षति जोखिम क्षेत्र में हैं। भूकंप से सुरक्षित समझे जाने वाले क्षेत्रों का एक बड़ा हिस्सा दक्कन पठार के स्थिर भूभाग में पड़ता है।

भूकंप के सामाजिक-पर्यावरणीय परिणाम

भूकंप के साथ भय जुड़ा है क्योंकि इससे बड़े पैमाने पर और बहुत तीव्रता के साथ भूतल पर विनाश होता है। अधिक जनसंख्या घनत्व वाले क्षेत्रों में तो यह आपदा कहर बरसाती है। ये न सिर्फ बस्तियों, बुनियादी ढाँचे, परिवहन व संचार व्यवस्था, उद्योग और अन्य विकासशील क्रियाओं को ध्वस्त करता है, अपितु लोगों के पीढ़ियों से संचित पदार्थ और सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत भी नष्ट कर देता है। यह लोगों को बेघर कर देता है और इससे विकासशील देशों की कमजोर अर्थव्यवस्था पर गहरी चोट पहुँचती है।

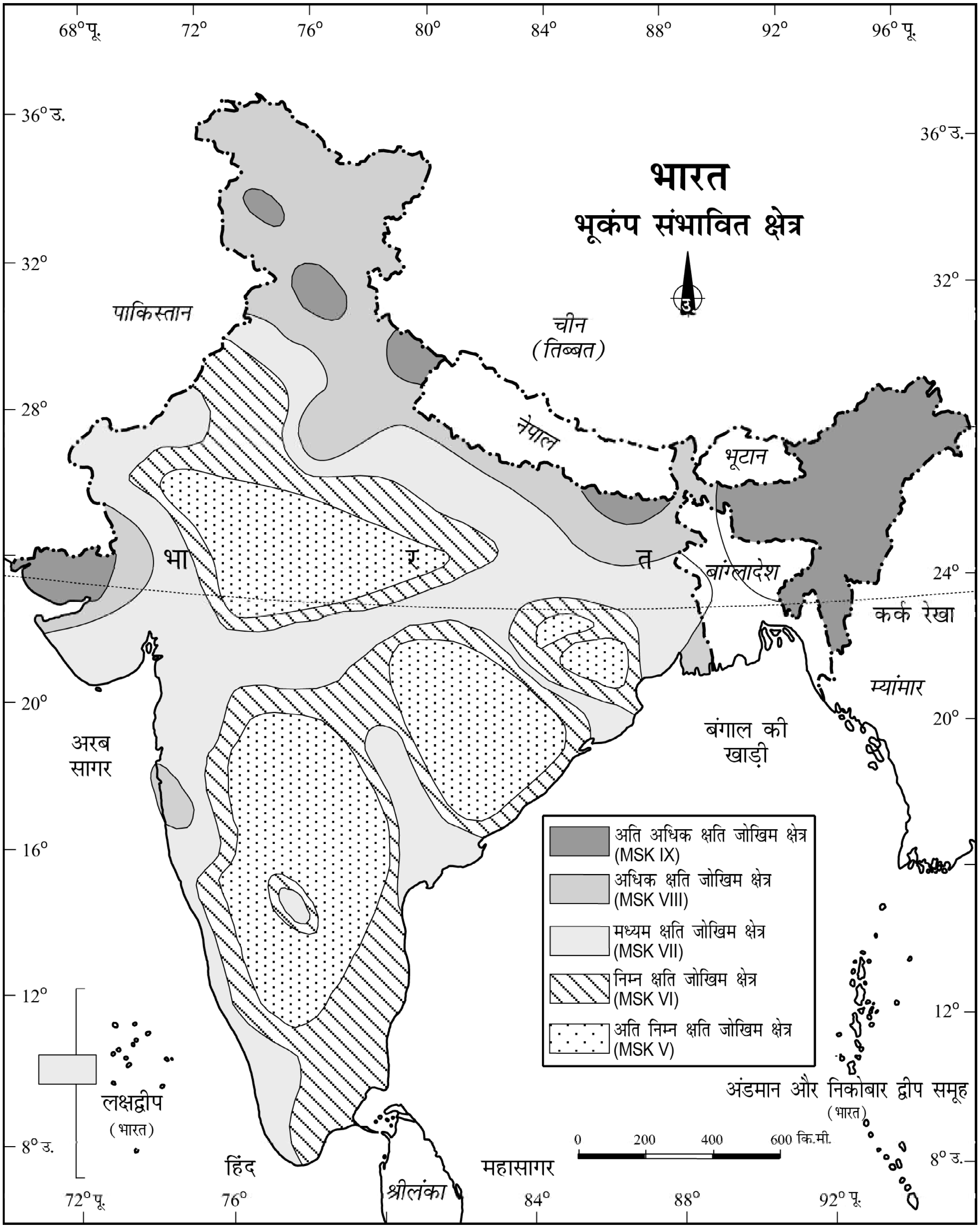

चित्र 7.2 : भारत : भूकंप संभावित क्षेत्र

भूकंप के प्रभाव

भूकंप जिन क्षेत्रों में आते हैं उनमें सम्मिलित विनाशकारी प्रभाव पाए जाते हैं। इसके कुछ मुख्य प्रभाव तालिका 7.3 में दिए गए हैं-

तालिका 7.3 : भूकंप के प्रभाव

भूतल पर	*मानवकृत ढाँचों पर*	*जल पर*
दरारें	दरारें पड़ना	लहरें
बस्तियाँ	खिसकना	जल-गतिशीलता दबाव
भू-स्खलन	उलटना	सुनामी
द्रवीकरण	आकुंचन	
भू-दबाव	निपात	
संभावित शृंखला प्रतिक्रिया	संभावित शृंखला प्रतिक्रिया	संभावित शृंखला प्रतिक्रिया

इसके अतिरिक्त भूकंप के कुछ गंभीर और दूरगामी पर्यावरणीय परिणाम हो सकते हैं। पृथ्वी की पर्पटी पर धरातलीय भूकंपी तरंगें दरारें डाल देती हैं जिसमें से पानी और दूसरा ज्वलनशील पदार्थ बाहर निकल आता है और आस-पड़ोस को डुबो देता है। भूकंप के कारण भू-स्खलन भी होता है, जो नदी वाहिकाओं को अवरुद्ध कर जलाशयों में बदल देता है। कई बार नदियाँ अपना रास्ता बदल लेती हैं जिससे प्रभावित क्षेत्र में बाढ़ और दूसरी आपदाएँ आ जाती हैं।

भूकंप न्यूनीकरण

दूसरी आपदाओं की तुलना में भूकंप अधिक विध्वंसकारी हैं। चूँकि यह परिवहन और संचार व्यवस्था भी नष्ट कर देते हैं इसलिए लोगों तक राहत पहुँचाना कठिन होता है। भूकंप को रोका नहीं जा सकता। अतः इसके लिए विकल्प यह है कि इस आपदा से निपटने की तैयारी रखी जाए और इससे होने वाले नुकसान को कम किया जाए। इसके निम्नलिखित तरीके हैं :

(i) भूकंप नियंत्रण केंद्रों की स्थापना, जिससे भूकंप संभावित क्षेत्रों में लोगों को सूचना पहुँचाई जा सके। जी.पी.एस (Geographical Positioning System) की मदद से प्लेट हलचल का पता लगाया जा सकता है।

(ii) देश में भूकंप संभावित क्षेत्रों का सुभेद्यता मानचित्र तैयार करना और संभावित जोखिम की सूचना लोगों तक पहुँचाना तथा उन्हें इसके प्रभाव को कम करने के बारे में शिक्षित करना।

(iii) भूकंप प्रभावित क्षेत्रों में घरों के प्रकार और भवन डिज़ाइन में सुधार लाना। ऐसे क्षेत्रों में ऊँची इमारतें, बड़े औद्योगिक संस्थान और शहरीकरण को बढ़ावा न देना।

(iv) अंततः भूकंप प्रभावित क्षेत्रों में भूकंप प्रतिरोधी (resistant) इमारतें बनाना और सुभेद्य क्षेत्रों में हल्के निर्माण सामग्री का इस्तेमाल करना।

सुनामी

भूकंप और ज्वालामुखी से महासागरीय धरातल में अचानक हलचल पैदा होती है और महासागरीय जल का अचानक विस्थापन होता है। परिणामस्वरूप ऊर्ध्वाधर ऊँची तरंगें पैदा होती हैं जिन्हें सुनामी (बंदरगाह लहरें) या भूकंपीय समुद्री लहरें कहा जाता है। सामान्यतः शुरू में सिर्फ एक ऊर्ध्वाधर तरंग ही पैदा होती है, परंतु कालांतर में जल तरंगों की एक शृंखला बन जाती है क्योंकि प्रारंभिक तरंग की ऊँची शिखर और नीची गर्त के बीच जल अपना स्तर बनाए रखने की कोशिश करता है।

महासागर में जल तरंग की गति जल की गहराई पर निर्भर करती है। इसकी गति उथले समुद्र में ज़्यादा और गहरे समुद्र में कम होती है। परिणामस्वरूप महासागरों के अंदरुनी भाग इससे कम प्रभावित होते हैं। तटीय क्षेत्रों में ये तरंगे ज़्यादा प्रभावी होती हैं और व्यापक नुकसान पहुँचाती हैं। इसलिए समुद्र में जलपोत पर, सुनामी का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। समुद्र के आंतरिक गहरे भाग में तो सुनामी महसूस भी नहीं होती। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि गहरे समुद्र में सुनामी की लहरों की लंबाई अधिक होती है और ऊँचाई कम होती है। इसलिए, समुद्र के इस भाग में सुनामी जलपोत को एक या दो मीटर तक ही ऊपर उठा सकती है और वह भी कई

मिनट में। इसके विपरीत, जब सुनामी उथले समुद्र में प्रवेश करती है, इसकी तरंग लंबाई कम होती चली जाती है, समय वही रहता है और तरंग की ऊँचाई बढ़ती जाती है। कई बार तो इसकी ऊँचाई 15 मीटर या इससे भी अधिक हो सकती है जिससे तटीय क्षेत्र में भीषण विध्वंस होता है। इसलिए इन्हें उथले जल की तरंगें भी कहते हैं। सुनामी आमतौर पर प्रशांत महासागरीय तट पर, जिसमें अलास्का, जापान, फिलिपाइन, दक्षिण–पूर्व एशिया के दूसरे द्वीप, इंडोनेशिया और मलेशिया तथा हिंद महासागर में म्यांमार, श्रीलंका और भारत के तटीय भागों में आती है।

तट पर पहुँचने पर सुनामी तरंगें बहुत अधिक मात्रा में ऊर्जा निर्मुक्त करती हैं और समुद्र का जल तेजी से तटीय क्षेत्रों में घुस जाता है और बंदरगाह शहरों, कस्बों, अनेक प्रकार के ढाँचों, इमारतों और बस्तियों को तबाह करता है। चूँकि विश्वभर में तटीय क्षेत्रों में जनसंख्या सघन होती है और ये क्षेत्र बहुत–सी मानव गतिविधियों के केंद्र होते हैं,

चित्र 7.3 : सुनामी प्रभावित क्षेत्र

अत: यहाँ दूसरी प्राकृतिक आपदाओं की तुलना में सुनामी अधिक जान–माल का नुकसान पहुँचाती है। सुनामी से हुई बर्बादी का अनुमान आपकी पुस्तक 'भूगोल में प्रायोगिक कार्य भाग-I, रा.शै.अ.प्र.प., 2006' में दिए हुए बांदा (इंडोनेशिया) के चित्र से लगाया जा सकता है।

दूसरी प्राकृतिक आपदाओं की तुलना में सुनामी के प्रभाव को कम करना कठिन है क्योंकि इससे होने वाले नुकसान का पैमाना बहुत बृहत् है।

किसी अकेले देश या सरकार के लिए सुनामी जैसी आपदा से निपटना संभव नहीं है। अत: इसके लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर के प्रयास आवश्यक हैं जैसाकि 26 दिसंबर, 2004 को आयी सुनामी के समय किया गया था। जिसके कारण 3 लाख से अधिक लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा था। इस सुनामी आपदा के बाद भारत ने अंतर्राष्ट्रीय सुनामी चेतावनी तंत्र में शामिल होने का फैसला किया है।

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात कम दबाव वाले उग्र मौसम तंत्र हैं और 30° उत्तर तथा 30° दक्षिण अक्षांशों के बीच पाए जाते हैं। ये आमतौर पर 500 से 1000 किलोमीटर क्षेत्र में फैला होता है और इसकी ऊर्ध्वाधर ऊँचाई 12 से 14 किलोमीटर हो सकती है। उष्ण कटिबंधीय चक्रवात या प्रभंजन एक ऊष्मा इंजन की तरह होते हैं, जिसे ऊर्जा प्राप्ति, समुद्र सतह से प्राप्त जलवाष्प की संघनन प्रक्रिया में छोड़ी गई गुप्त ऊष्मा से होती है।

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात की उत्पत्ति के बारे में वैज्ञानिकों में मतभेद हैं। इनकी उत्पत्ति के लिए निम्नलिखित प्रारंभिक परिस्थितियों का होना आवश्यक है।

(i) लगातार और पर्याप्त मात्रा में उष्ण व आर्द्र वायु की सतत् उपलब्धता जिससे बहुत बड़ी मात्रा में गुप्त ऊष्मा निर्मुक्त हो।

(ii) तीव्र कोरियोलिस बल जो केंद्र के निम्न वायु दाब को भरने न दे। (भूमध्य रेखा के आस पास 0° से 5° कोरियोलिस बल कम होता है और परिणामस्वरूप यहाँ ये चक्रवात उत्पन्न नहीं होते)।

(iii) क्षोभमंडल में अस्थिरता, जिससे स्थानीय स्तर पर निम्न वायु दाब क्षेत्र बन जाते हैं। इन्हीं के चारों ओर चक्रवात भी विकसित हो सकते हैं।

(iv) मजबूत ऊर्ध्वाधर वायु फान (wedge) की अनुपस्थिति, जो नम और गुप्त ऊष्मा युक्त वायु के ऊर्ध्वाधर बहाव को अवरुद्ध करे।

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात की संरचना

उष्ण कटिबंधीय चक्रवात में वायुदाब प्रवणता बहुत अधिक होती है। चक्रवात का केंद्र गर्म वायु तथा निम्न वायुदाब और मेघरहित क्रोड होता है। इसे 'तूफान की आँख' कहा जाता है। सामान्यत: समदाब रेखाएँ एक–दूसरे

के नजदीक होती हैं जो उच्च वायुदाब प्रवणता का प्रतीक है। वायुदाब प्रवणता 14 से 17 मिलीबार/100 किलोमीटर के आसपास होता है। कई बार यह 60 मिलीबार/100 किलोमीटर तक हो सकता है। केंद्र से पवन पट्टी का विस्तार 10 से 150 किलोमीटर तक होता है।

भारत में चक्रवातों का क्षेत्रीय और समयानुसार वितरण

भारत की आकृति प्रायद्वीपीय है और इसके पूर्व में बंगाल की खाड़ी तथा पश्चिम में अरब सागर है। अत: यहाँ आने वाले चक्रवात इन्हीं दो जलीय क्षेत्रों में पैदा होते हैं। मानसूनी मौसम के दौरान चक्रवात 10° से 15° उत्तर अक्षांशों के बीच पैदा होते हैं। बंगाल की खाड़ी में चक्रवात ज़्यादातर अक्तूबर और नवम्बर में बनते हैं। यहाँ ये चक्रवात 16° से 21° उत्तर तथा 92° पूर्व देशांतर से पश्चिम में पैदा होते हैं, परंतु जुलाई में ये सुंदर वन डेल्टा के करीब 18° उत्तर और 90° पूर्व देशांतर से पश्चिम में उत्पन्न होते हैं। चक्रवातों की बारंबारता और समय तालिका 7.4 में दिखाया गया है।

तालिका 7.4 : भारत में चक्रवातों की बारंबारता

महीना	*बंगाल की खाड़ी*	*अरब सागर*
जनवरी	4 (1.3) *	2 (2.4)
फरवरी	1 (0.3)	0 (0.0)
मार्च	4 (1.30)	0 (0.0)
अप्रैल	18 (5.7)	5 (6.1)
मई	28 (8.9)	13 (15.9)
जून	34 (10.8)	13 (15.9)
जुलाई	38 (12.1)	3 (3.7)
अगस्त	25 (8.0)	1 (1.2)
सितंबर	27 (8.6)	4 (4.8)
अक्तूबर	53 (16.9)	17 (20.7)
नवंबर	56 (17.8)	21 (25.6)
दिसंबर	26 (8.3)	3 (3.7)
कुल	314 (100)	82 (100)

* कोष्ठक में दिए गए आँकड़े साल में कुल चक्रवातों का प्रतिशत है।

उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों के परिणाम

यह पहले बताया जा चुका है कि उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों की ऊर्जा का स्रोत उष्ण आर्द्र वायु से प्राप्त होने वाली गुप्त ऊष्मा है। अत: समुद्र से दूरी बढ़ने पर चक्रवात का बल कमजोर हो जाता है। भारत में, चक्रवात जैसे-जैसे बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से दूर जाता है उसका बल कमजोर हो जाता है। तटीय क्षेत्रों में अकसर उष्ण कटिबंधीय चक्रवात 180 किलोमीटर प्रतिघंटा की गति से टकराते हैं। इससे तूफानी क्षेत्र में समुद्र तल भी असाधारण रूप से ऊपर उठा होता है जिसे 'तूफान महोर्मि' (storm surge) कहा जाता है।

> समुद्र तल में महोर्मि वायु, समुद्र और जमीन की अंत:क्रिया से उत्पन्न होता है। तूफान में अत्यधिक वायुदाब प्रवणता और अत्यधिक तेज सतही पवनें उफान को उठाने वाले बल हैं। इससे समुद्री जल तटीय क्षेत्रों में घुस जाता है, वायु की गति तेज होती है और भारी वर्षा होती है।

इससे तटीय क्षेत्र में बस्तियाँ, खेत पानी में डूब जाते हैं तथा फसलों और कई प्रकार के मानवकृत ढाँचों का विनाश होता है।

बाढ़

आपने बाढ़ के बारे में समाचार पत्रों में पढ़ा होगा और टेलीविजन पर इसके दृश्य देखे होंगे कि किस तरह कुछ क्षेत्र वर्षा ऋतु में बाढ़ ग्रस्त हो जाते हैं। नदी का जल उफान के समय जल वाहिकाओं को तोड़ता हुआ मानव बस्तियों और आस-पास की जमीन पर खड़ा हो जाता है और बाढ़ की स्थिति पैदा कर देता है। दूसरी प्राकृतिक आपदाओं की तुलना में बाढ़ आने के कारण जाने-पहचाने हैं। बाढ़ आमतौर पर अचानक नहीं आती और कुछ विशेष क्षेत्रों और ऋतु में ही आती है। बाढ़ तब आती है जब नदी जल-वाहिकाओं में इनकी क्षमता से अधिक जल बहाव होता है और जल, बाढ़ के रूप में मैदान के निचले हिस्सों में भर जाता है। कई बार तो झीलें और आंतरिक जल क्षेत्रों में भी क्षमता से अधिक जल भर जाता है। बाढ़ आने के और भी कई कारण हो सकते हैं, जैसे- तटीय क्षेत्रों में तूफानी महोर्मि, लंबे समय तक होने वाली तेज बारिश, हिम का पिघलना, जमीन की अंत:स्पंदन (infiltration) दर में कमी आना और अधिक मृदा अपरदन के कारण नदी जल में जलोढ़ की मात्रा में वृद्धि होना। हालाँकि बाढ़ विश्व में विस्तृत क्षेत्र में आती है

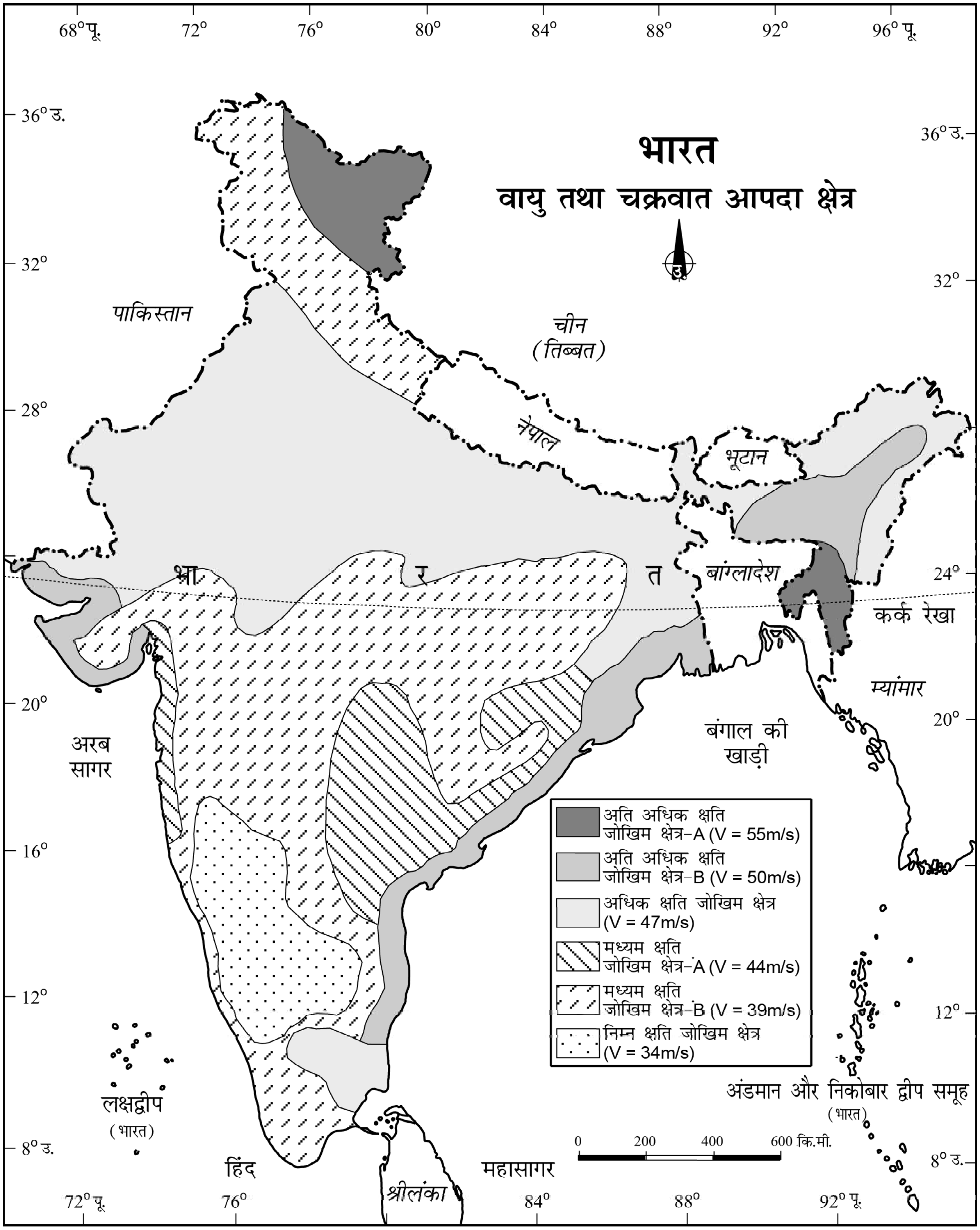

चित्र 7.4 : भारत : वायु तथा चक्रवात आपदा क्षेत्र

चित्र 7.5 : बाढ़ के समय ब्रह्मपुत्र

तथा काफी तबाही लाती है, परंतु दक्षिण, दक्षिण-पूर्व और पूर्व एशिया के देशों, विशेषकर चीन, भारत और बांग्लादेश में इसकी बारंबारता और होने वाले नुकसान अधिक हैं।

दूसरी प्राकृतिक आपदाओं की तुलना में, बाढ़ की उत्पत्ति और इसके क्षेत्रीय फैलाव में मानव एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। मानवीय क्रियाकलापों, अँधाधुँध वन कटाव, अवैज्ञानिक कृषि पद्धतियाँ, प्राकृतिक अपवाह तंत्रों का अवरुद्ध होना तथा नदी तल और बाढ़कृत मैदानों पर मानव बसाव की वजह से बाढ़ की तीव्रता, परिमाण और विध्वंसता बढ़ जाती है।

भारत के विभिन्न राज्यों में बार-बार आने वाली बाढ़ के कारण जान-माल का भारी नुकसान होता है। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग ने देश में 4 करोड़ हैक्टेयर भूमि को बाढ़ प्रभावित क्षेत्र घोषित किया है। मानचित्र 7.6 भारत के बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों को दर्शाता है। असम, पश्चिम बंगाल और बिहार राज्य सबसे अधिक बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में से हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत की ज़्यादातर नदियाँ, विशेषकर पंजाब और उत्तर प्रदेश में बाढ़ लाती रहती हैं। राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और पंजाब, आकस्मिक बाढ़ से पिछले कुछ दशकों में जलमग्न होते रहे हैं। इसका कारण मानसून वर्षा की तीव्रता तथा मानव कार्यकलापों द्वारा प्राकृतिक अपवाह तंत्र का अवरुद्ध होना है। कई बार तमिलनाडु में बाढ़ नवंबर से जनवरी माह के बीच वापिस लौटती मानसून द्वारा आती है।

बाढ़ परिणाम और नियंत्रण

असम, पश्चिम बंगाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश (मैदानी क्षेत्र) और उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और गुजरात के तटीय क्षेत्र तथा पंजाब, राजस्थान, उत्तर गुजरात और हरियाणा में बार-बार बाढ़ आने और कृषि भूमि तथा मानव बस्तियों के डूबने से देश की आर्थिक व्यवस्था तथा समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। बाढ़ न सिर्फ फसलों को बर्बाद करती है बल्कि आधारभूत ढाँचा, जैसे- सड़कें, रेल पटरी, पुल और मानव बस्तियों को भी नुकसान पहुँचाती है। बाढ़ ग्रस्त क्षेत्रों में कई तरह की बीमारियाँ, जैसे- हैजा, आंत्रशोथ, हेपेटाईटिस और दूसरी दूषित जल जनित बीमारियाँ फैल जाती हैं। दूसरी ओर बाढ़ से कुछ लाभ भी हैं। हर वर्ष बाढ़ खेतों में उपजाऊ मिट्टी लाकर जमा करती है जो फसलों के लिए बहुत लाभदायक है। ब्रह्मपुत्र नदी में स्थित मजौली (असम) जो सबसे बड़ा नदीय द्वीप है, हर वर्ष बाढ़ ग्रस्त होता है। परंतु यहाँ चावल की फसल बहुत अच्छी होती है। लेकिन ये लाभ भीषण नुकसान के सामने गौण मात्र है।

भारत सरकार और राज्य सरकारें हर वर्ष बाढ़ से पैदा होने वाली गंभीर स्थिति से अवगत हैं। ये सरकारें बाढ़ की स्थिति से कैसे निपटती हैं? इस दिशा में कुछ महत्त्वपूर्ण कदम इस प्रकार होने चाहिए:- बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में तटबंध बनाना, नदियों पर बाँध बनाना, वनीकरण और आमतौर पर बाढ़ लाने वाली नदियों के ऊपरी जल ग्रहण क्षेत्र में निर्माण कार्य पर प्रतिबंध लगाना। नदी वाहिकाओं पर बसे लोगों को कहीं और बसाना और बाढ़ के मैदानों में जनसंख्या के जमाव पर नियंत्रण रखना, इस दिशा में कुछ और कदम हो सकते हैं। आकस्मिक बाढ़ प्रभावित देश के पश्चिमी और उत्तरी भागों में यह ज़्यादा उपयुक्त कदम होंगे। तटीय क्षेत्रों में चक्रवात सूचना केंद्र तूफान के उफान से होने वाले प्रभाव को कम कर सकते हैं।

सूखा

सूखा ऐसी स्थिति को कहा जाता है जब लंबे समय तक कम वर्षा, अत्यधिक वाष्पीकरण और जलाशयों तथा भूमिगत जल के अत्यधिक प्रयोग से भूतल पर जल की कमी हो जाए।

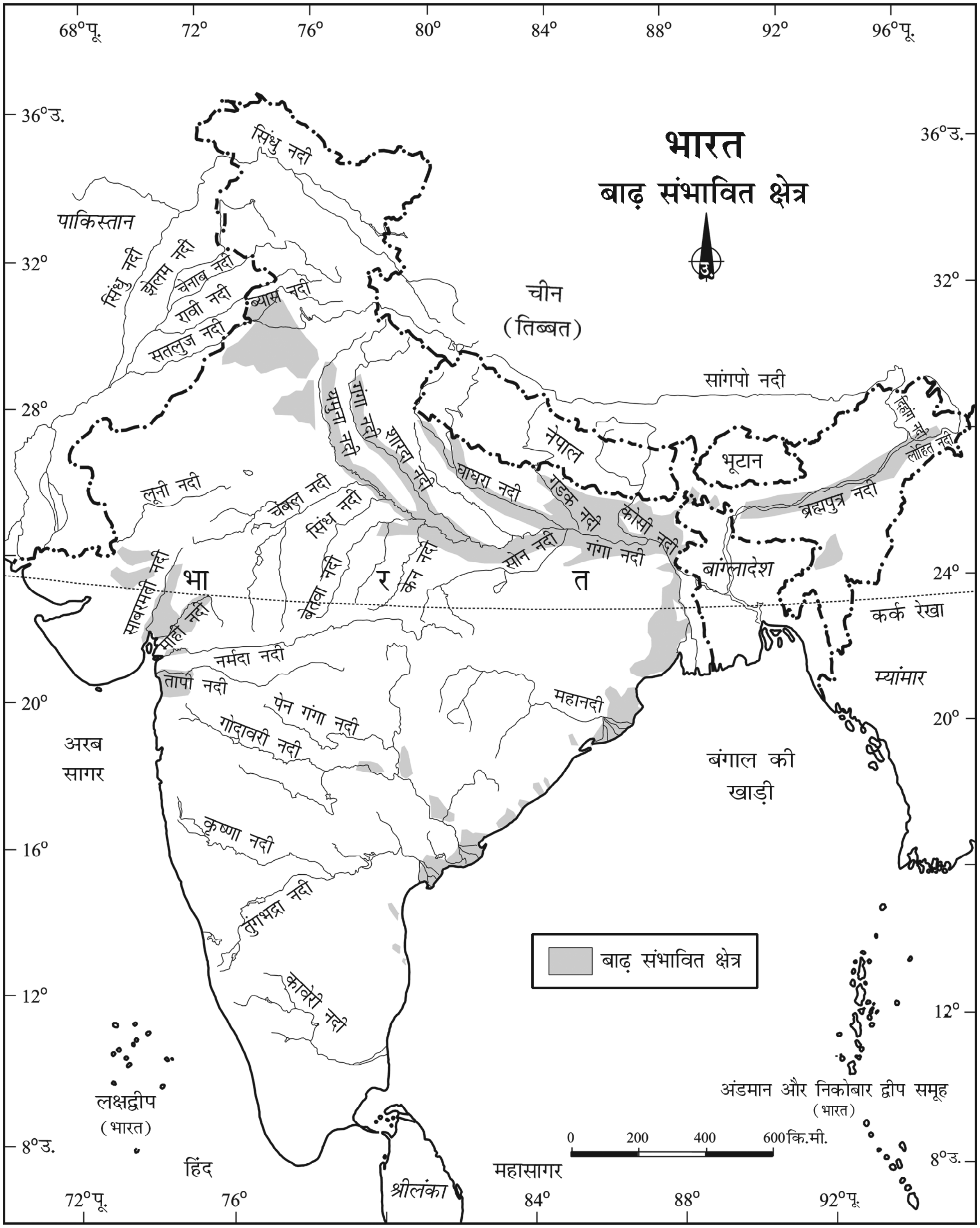

चित्र 7.6 : भारत : बाढ़ संभावित क्षेत्र

> सूखा एक जटिल परिघटना है जिसमें कई प्रकार के मौसम विज्ञान संबंधी तथा अन्य तत्त्व, जैसे- वृष्टि, वाष्पीकरण, वाष्पोत्सर्जन, भौम जल, मृदा में नमी, जल भंडारण व भरण, कृषि पद्धतियाँ, विशेषत: उगाई जाने वाली फसलें, सामाजिक-आर्थिक गतिविधियाँ और पारिस्थितिकी शामिल हैं।

सूखे के प्रकार

मौसमविज्ञान संबंधी सूखा

यह एक ऐसी स्थिति है, जिसमें लंबे समय तक अपर्याप्त वर्षा होती है और इसका सामयिक और स्थानिक वितरण भी असंतुलित होता है।

कृषि सूखा

इसे भूमि-आर्द्रता सूखा भी कहा जाता है। मिट्टी में आर्द्रता की कमी के कारण फसलें मुरझा जाती हैं। जिन क्षेत्रों में 30 प्रतिशत से अधिक कुल बोये गए क्षेत्र में सिंचाई होती है, उन्हें भी सूखा प्रभावित क्षेत्र नहीं माना जाता।

जलविज्ञान संबंधी सूखा

यह स्थिति तब पैदा होती है जब विभिन्न जल संग्रहण, जलाशय, जलभूत और झीलों इत्यादि का स्तर वृष्टि द्वारा की जाने वाली जलापूर्ति के बाद भी नीचे गिर जाए।

पारिस्थितिक सूखा

जब प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र में जल की कमी से

चित्र 7.7 : सूखा

उत्पादकता में कमी हो जाती है और परिणामस्वरूप पारिस्थितिक तंत्र में तनाव आ जाता है तथा यह क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो परिस्थितिक सूखा कहलाता है।

भारत में सूखा ग्रस्त क्षेत्र

भारतीय कृषि काफी हद तक मानसून वर्षा पर निर्भर करती रही है। भारतीय जलवायु तंत्र में सूखा और बाढ़ महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। कुछ अनुमानों के अनुसार भारत में कुल भौगोलिक क्षेत्र का 19 प्रतिशत भाग और जनसंख्या का 12 प्रतिशत हिस्सा हर वर्ष सूखे से प्रभावित होता है। देश का लगभग 30 प्रतिशत क्षेत्र सूखे से प्रभावित हो सकता है जिससे 5 करोड़ लोग इससे प्रभावित होते हैं। यह प्राय: देखा गया है कि जब देश के कुछ भागों में बाढ़ कहर ढा रही होती है, उसी समय दूसरे भाग सूखे से जूझ रहे होते हैं। यह मानसून में परिवर्तनशीलता और इसके व्यवहार में अनिश्चितता का परिणाम है। सूखे का प्रभाव भारत में बहुत व्यापक है, परंतु कुछ क्षेत्र जहाँ ये बार-बार पड़ते हैं और जहाँ उनका असर अधिक है सूखे की तीव्रता के आधार पर निम्नलिखित क्षेत्रों में बाँटा गया है।

अत्यधिक सूखा प्रभावित क्षेत्र

मानचित्र 7.8 दर्शाता है कि राजस्थान में ज़्यादातर भाग, विशेषकर अरावली के पश्चिम में स्थित मरुस्थली और गुजरात का कच्छ क्षेत्र अत्यधिक सूखा प्रभावित है। इसमें राजस्थान के जैसलमेर और बाड़मेर जिले भी शामिल हैं, जहाँ 90 मिलीलीटर से कम औसत वार्षिक वर्षा होती है।

अधिक सूखा प्रभावित क्षेत्र

इसमें राजस्थान के पूर्वी भाग, मध्य प्रदेश के ज़्यादातर भाग, महाराष्ट्र के पूर्वी भाग, आंध्र प्रदेश के अंदरूनी भाग, कर्नाटक का पठार, तमिलनाडु के उत्तरी भाग, झारखंड का दक्षिणी भाग और ओडिशा का आंतरिक भाग शामिल है।

मध्यम सूखा प्रभावित क्षेत्र

इस वर्ग में राजस्थान के उत्तरी भाग, हरियाणा, उत्तर प्रदेश के दक्षिणी जिले, गुजरात के बचे हुए जिले, कोंकण को छोड़कर महाराष्ट्र, झारखंड, तमिलनाडु में कोयंबटूर पठार

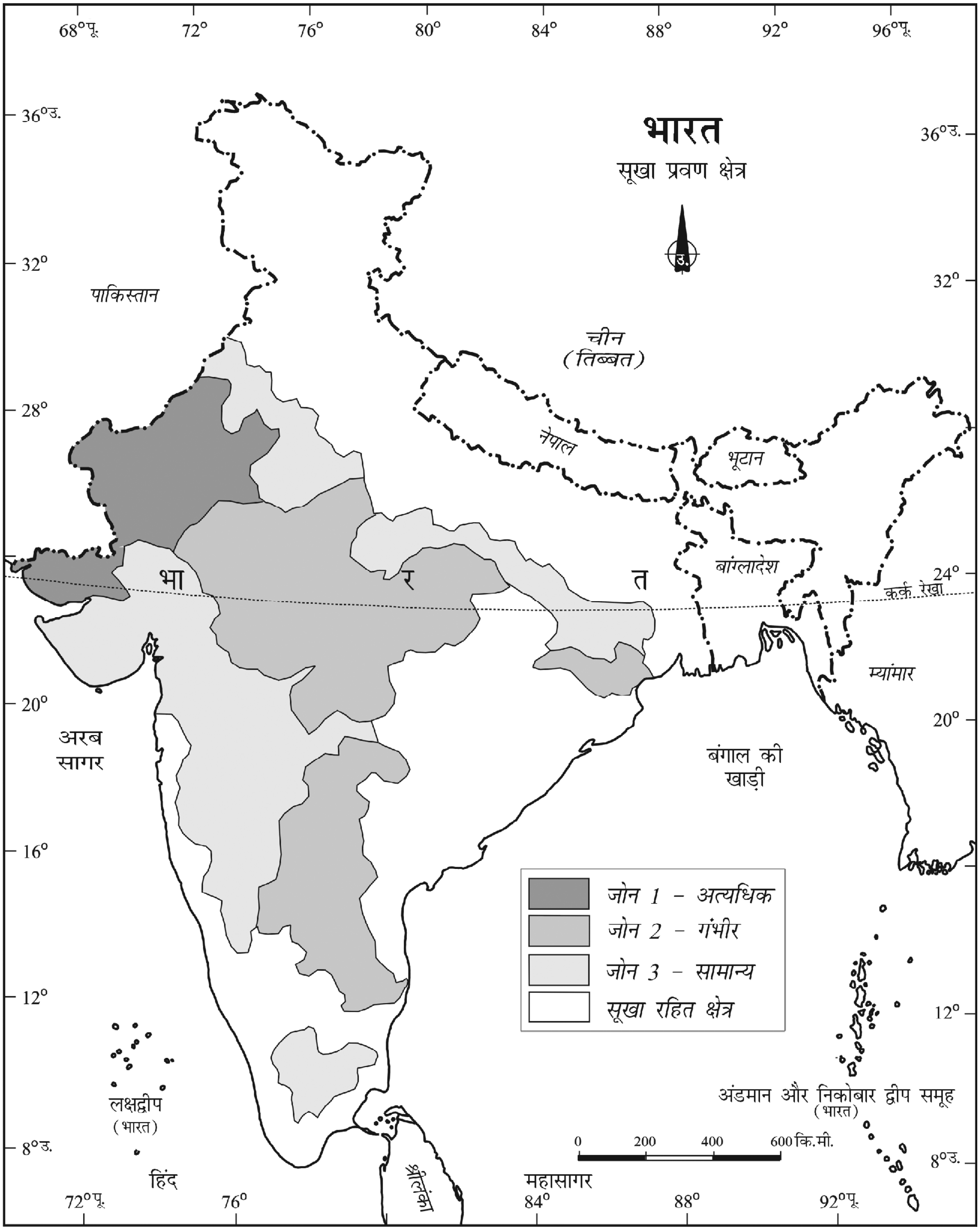

चित्र 7.8 : भारत : सूखा प्रवण क्षेत्र

और आंतरिक कर्नाटक शामिल हैं। भारत के बचे हुए भाग बहुत कम या न के बराबर सूखे से प्रभावित हैं।

सूखे के परिणाम

पर्यावरण और समाज पर सूखे का सोपानी प्रभाव पड़ता है। फसलें बर्बाद होने से अन्न की कमी हो जाती है, जिसे अकाल कहा जाता है। चारा कम होने की स्थिति को तृण अकाल कहा जाता है। जल आपूर्ति की कमी जल अकाल कहलाती है, तीनों परिस्थितियाँ मिल जाएँ तो त्रि-अकाल कहलाती है जो सबसे अधिक विध्वंसक है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में वृहत् पैमाने पर मवेशियों और अन्य पशुओं की मौत, मानव प्रवास तथा पशु पलायन एक सामान्य परिवेश है। पानी की कमी के कारण लोग दूषित जल पीने को बाध्य होते हैं। इसके परिणामस्वरूप पेयजल संबंधी बीमारियाँ जैसे आंत्रशोथ, हैजा और हेपेटाईटिस हो जाती है।

सामाजिक और प्राकृतिक पर्यावरण पर सूखे का प्रभाव तात्कालिक एवं दीर्घकालिक होता है। इसलिए सूखे से निपटने के लिए तैयार की जा रही योजनाओं को उन्हें ध्यान में रखकर बनाना चाहिए। सूखे की स्थिति में तात्कालिक सहायता में सुरक्षित पेयजल वितरण, दवाइयाँ, पशुओं के लिए चारे और जल की उपलब्धता तथा लोगों और पशुओं को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाना शामिल है। सूखे से निपटने के लिए दीर्घकालिक योजनाओं में विभिन्न कदम उठाए जा सकते हैं, जैसे – भूमिगत जल के भंडारण का पता लगाना, जल आधिक्य क्षेत्रों से अल्पजल क्षेत्रों में पानी पहुँचाना, नदियों को जोड़ना और बाँध व जलाशयों का निर्माण इत्यादि। नदियाँ जोड़ने के लिए द्रोणियों की पहचान तथा भूमिगत जल भंडारण की संभावना का पता लगाने के लिए सुदूर संवेदन और उपग्रहों से प्राप्त चित्रों का प्रयोग करना चाहिए।

सूखा प्रतिरोधी फसलों के बारे में प्रचार-प्रसार सूखे से लड़ने के लिए एक दीर्घकालिक उपाय है। वर्षा जल संलवन (Rain water harvesting) सूखे का प्रभाव कम करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

अपने पास-पड़ोस में छत से वर्षा जल संलवन करने के तरीके समझें और इन्हें ज्यादा कारगर बनाने के उपाय सुझाएँ।

भूस्खलन

क्या आपने श्रीनगर को जाने वाली सड़क तथा कोंकण रेल पटरी पर चट्टानें गिरने से रास्ता रुकने के बारे में पढ़ा है। यह भूस्खलन की वजह से होता है, जिसमें चट्टान समूह खिसककर ढाल से नीचे गिरता है। सामान्यत: भूस्खलन भूकंप, ज्वालामुखी फटने, सुनामी और चक्रवात की तुलना में कोई बड़ी घटना नहीं है, परन्तु इसका प्राकृतिक पर्यावरण और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अन्य आपदाओं के विपरीत, जो आकस्मिक, अननुमेय तथा बृहत स्तर पर दीर्घ एवं प्रादेशिक कारकों से नियंत्रित हैं, भूस्खलन मुख्य रूप से स्थानीय कारणों से उत्पन्न होते हैं। इसलिए भूस्खलन के बारे में आँकड़े एकत्र करना और इसकी संभावना का अनुमान लगाना न सिर्फ मुश्किल अपितु काफी महँगा पड़ता है।

भूस्खलन को परिभाषित करना और इसके व्यवहार को शब्दों में बाँधना मुश्किल कार्य है। परंतु फिर भी पिछले अनुभवों, इसकी बारंबारता और इसके घटने को प्रभावित करने वाले कारकों, जैसे – भूविज्ञान, भूआकृतिक कारक, ढ़ाल, भूमि उपयोग, वनस्पति आवरण और मानव क्रियाकलापों के आधार पर भारत को विभिन्न भूस्खलन क्षेत्रों में बाँटा गया है।

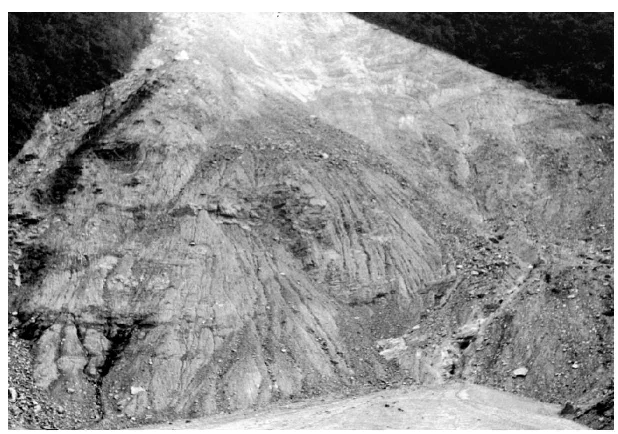

चित्र 7.9 : भूस्खलन

अत्यधिक सुभेद्यता क्षेत्र

ज्यादा अस्थिर हिमालय की युवा पर्वत शृंखलाएँ, अंडमान और निकोबार, पश्चिमी घाट और नीलगिरी में अधिक वर्षा वाले क्षेत्र, उत्तर-पूर्वी क्षेत्र, भूकंप प्रभावी क्षेत्र और

अत्यधिक मानव क्रियाकलापों वाले क्षेत्र, जिसमें सड़क और बाँध निर्माण इत्यादि आते हैं, अत्यधिक भूस्खलन सुभेद्यता क्षेत्रों में रखे जाते हैं।

अधिक सुभेद्यता क्षेत्र

अधिक भूस्खलन सुभेद्यता क्षेत्रों में भी अत्यधिक सुभेद्यता क्षेत्रों से मिलती-जुलती परिस्थितियाँ हैं। दोनों में अंतर है, भूस्खलन को नियंत्रण करने वाले कारकों के संयोजन, गहनता और बारंबारता का। हिमालय क्षेत्र के सारे राज्य और उत्तर-पूर्वी भाग (असम को छोड़कर) इस क्षेत्र में शामिल हैं।

मध्यम और कम सुभेद्यता क्षेत्र

पार हिमालय के कम वृष्टि वाले क्षेत्र लद्दाख और हिमाचल प्रदेश में स्पिती, अरावली पहाड़ियों में कम वर्षा वाला क्षेत्र, पश्चिमी व पूर्वी घाट के व दक्कन पठार के वृष्टि छाया क्षेत्र ऐसे इलाके हैं, जहाँ कभी-कभी भूस्खलन होता है। इसके अलावा झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, गोवा और केरल में खादानों और भूमि धँसने से भूस्खलन होता रहता है।

अन्य क्षेत्र

भारत के अन्य क्षेत्र विशेषकर राजस्थान, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल (दार्जिलिंग जिले को छोड़कर) असम (कार्बी अनलोंग को छोड़कर) और दक्षिण प्रांतों के तटीय क्षेत्र भूस्खलन युक्त हैं।

भूस्खलनों के परिणाम

भूस्खलनों का प्रभाव अपेक्षाकृत छोटे क्षेत्र में पाया जाता है तथा स्थानीय होता है। परन्तु सड़क मार्ग में अवरोध, रेलपटरियों का टूटना और जल वाहिकाओं में चट्टानें गिरने से पैदा हुई रुकावटों के गंभीर परिणाम हो सकते हैं। भूस्खलन की वजह से हुए नदी रास्तों में बदलाव बाढ़ ला सकते हैं और जान माल का नुकसान हो सकता है। इससे इन क्षेत्रों में आवागमन मुश्किल हो जाता है और विकास कार्यों की रफ़्तार धीमी पड़ जाती है।

निवारण

भूस्खलन से निपटने के उपाय अलग-अलग क्षेत्रों के लिए अलग-अलग होने चाहिए। अधिक भूस्खलन संभावी क्षेत्रों में सड़क और बड़े बाँध बनाने जैसे निर्माण कार्य तथा विकास कार्य पर प्रतिबंध होना चाहिए। इन क्षेत्रों में कृषि नदी घाटी तथा कम ढाल वाले क्षेत्रों तक सीमित होनी चाहिए तथा बड़ी विकास परियोजनाओं पर नियंत्रण होना चाहिए। सकारात्मक कार्य जैसे- बृहत स्तर पर वनीकरण को बढ़ावा और जल बहाव को कम करने के लिए बाँध का निर्माण भूस्खलन के उपायों के पूरक हैं। स्थानांतरी कृषि वाले उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेत बनाकर कृषि की जानी चाहिए।

आपदा प्रबंधन

भूकंप, सुनामी और ज्वालामुखी की तुलना में चक्रवात के आने के समय एवं स्थान की भविष्यवाणी संभव है। इसके अतिरिक्त आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करके चक्रवात की गहनता, दिशा और परिमाण आदि को मॉनीटर करके इससे होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। इससे होने वाले नुकसान को कम करने के लिए चक्रवात शेल्टर, तटबंध, डाइक, जलाश्य निर्माण तथा वायुवेग को कम करने के लिए वनीकरण जैसे कदम उठाए जा सकते हैं, फिर भी भारत, बांग्लादेश, म्यांमार इत्यादि देशों के तटीय क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या की सुभेद्यता अधिक है, इसीलिए यहाँ जान-माल का नुकसान बढ़ रहा है।

आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005

इस अधिनियम में आपदा को किसी क्षेत्र में घटित एक महाविपत्ति, दुर्घटना, संकट या गंभीर घटना के रूप में परिभाषित किया गया है, जो प्राकृतिक या मानवकृत कारणों या दुर्घटना या लापरवाही का परिणाम हो और जिससे बड़े स्तर पर जान की क्षति या मानव पीड़ा, पर्यावरण की हानि एवं विनाश हो और जिसकी प्रकृति या परिमाण प्रभावित क्षेत्र में रहने वाले मानव समुदाय की सहन क्षमता से परे हो।

निष्कर्ष

ऊपरलिखित विवरण से यह निष्कर्ष निकलता है कि आपदाएँ प्राकृतिक या मानवकृत दोनों प्रकार की हो सकती हैं, परन्तु हर संकट आपदा भी नहीं होती। आपदाओं और विशेषकर प्राकृतिक आपदाओं पर नियंत्रण मुश्किल है। इसका बेहतर उपाय इनके निवारण की तैयारियाँ करना है। आपदा निवारण और प्रबंधन की तीन अवस्थाएँ हैं :

(i) आपदा से पहले – आपदा के बारे में आँकड़े और सूचना एकत्र करना, आपदा संभावी क्षेत्रों का मानचित्र तैयार करना और लोगों को इसके बारे में जानकारी देना। इसके अलावा संभावी क्षेत्रों में आपदा योजना बनाना, तैयारियाँ रखना और बचाव का उपाय करना।

(ii) आपदा के समय – युद्ध स्तर पर बचाव व राहत कार्य, जैसे– आपदाग्रस्त क्षेत्रों से लोगों को निकालना, आश्रय स्थल निर्माण, राहत कैंप, जल, भोजन व दवाई आपूर्ति।

(iii) आपदा के पश्चात – प्रभावित लोगों का बचाव और पुनर्वास। भविष्य में आपदाओं से निपटने के लिए क्षमता–निर्माण पर ध्यान केंद्रित करना।

भारत जैसे देश में, जहाँ दो–तिहाई क्षेत्र और जनसंख्या आपदा सुभेद्य है, इन उपायों का विशेष महत्त्व है। आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 और राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान की स्थापना इस दिशा में भारत सरकार द्वारा उठाए गए सकारात्मक कदम का उदाहरण है।

अभ्यास

1. बहुवैकल्पिक प्रश्न :

(i) इनमें से भारत के किस राज्य में बाढ़ अधिक आती है?
(क) बिहार (ख) पश्चिम बंगाल
(ग) असम (घ) उत्तर प्रदेश

(ii) उत्तरांचल के किस जिले में मालपा भूस्खलन आपदा घटित हुई थी?
(क) बागेश्वर (ख) चंपावत
(ग) अल्मोड़ा (घ) पिथोरागढ़

(iii) इनमें से कौन–से राज्य में सर्दी के महीनों में बाढ़ आती है?
(क) असम (ख) पश्चिम बंगाल
(ग) केरल (घ) तमिलनाडु

(iv) इनमें से किस नदी में मजौली नदीय द्वीप स्थित है?
(क) गंगा (ख) ब्रह्मपुत्र
(ग) गोदावरी (घ) सिंधु

(v) बर्फानी तूफान किस तरह की प्राकृतिक आपदा है?
(क) वायुमंडलीय (ख) जलीय
(ग) भौमिकी (घ) जीवमंडलीय

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 30 से कम शब्दों में दें।

(i) संकट किस दशा में आपदा बन जाता है?
(ii) हिमालय और भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में अधिक भूकंप क्यों आते हैं?
(iii) उष्ण कटिबंधीय तूफान की उत्पत्ति के लिए कौन–सी परिस्थितियाँ अनुकूल हैं?
(vi) पूर्वी भारत की बाढ़, पश्चिमी भारत की बाढ़ से अलग कैसे होती है?
(v) पश्चिमी और मध्य भारत में सूखे ज्यादा क्यों पड़ते हैं?

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 125 शब्दों में दें।
   (i) भारत में भूस्खलन प्रभावित क्षेत्रों की पहचान करें और इस आपदा के निवारण के कुछ उपाय बताएँ।
   (ii) सुभेद्यता क्या है? सूखे के आधार पर भारत को प्राकृतिक आपदा भेद्यता क्षेत्रों में विभाजित करें और इसके निवारण के उपाय बताएँ।
   (v) किस स्थिति में विकास कार्य आपदा का कारण बन सकता है?

परियोजना/क्रियाकलाप

नीचे दिए गए विषयों पर प्रोजेक्ट रिपोर्ट तैयार करें।

(i) मालपा भूस्खलन
(ii) सुनामी
(iii) ओडिशा चक्रवात और गुजरात चक्रवात
(iv) नदियों को आपस में जोड़ना
(v) टेहरी बाँध/सरदार सरोवर
(vi) भुज/लातूर भूकंप
(vii) डेल्टा/नदीय द्वीप में जीवन
(viii) छत वर्षा जल संलवन का मॉडल तैयार करें।

अध्याय

8

छत्तीसगढ़ का भूगोल

स्थिति एवं विस्तार :

छत्तीसगढ़ राज्य का भौगोलिक विस्तार 17048′ उत्तर अक्षांश से 24006′ उत्तरी अक्षांश तथा 80015′ पूर्वी देशांतर से 84025′ पूर्व देशांतर के मध्य है। यह राज्य अक्षांश एवं देशांतरीय विस्तार के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। क्योंकि राज्य के उत्तरी भाग से कर्क रेखा (23030′ उत्तर अक्षांश) और मध्यवर्ती भाग से भारत का मानक समय देशांतर (82030′ पूर्व देशान्तर) गुजरती है। किसी भी स्थान का कर्क रेखा पर स्थित होने पर क्या प्रभाव पड़ता है? विश्व जलवायु कटिबंधों के निर्धारण में कर्क रेखा एक महत्वपूर्ण विभाजक रेखा है उत्तरी गोलार्द्ध में इस रेखा तक सूर्य की किरणें समकोण बनाती हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में किस रेखा तक सूर्य समकोण बनाती हैं? कर्क रेखा उत्तरी गोलार्द्ध में उष्ण कटिबंध को शीतोष्ण कटिबंध से अलग करती है। इस प्रकार राज्य का अधिकांश भाग उष्ण कटिबंधीय जलवायु प्रदेश है। जिसका प्रभाव यहाँ की जलवायु पर देखा जाता है, हाँ एक तथ्य यह भी है कि जलवायु पर केवल अक्षांश का ही प्रभाव नहीं पड़ता है बल्कि कई और भी कारकों का प्रभाव पड़ता है। भारत में मानक समय निर्धारक रेखा 82030′ पूर्व देशान्तर रेखा है। यह रेखा छत्तीसगढ़ के मध्यवर्ती भाग से गुजरती है अर्थात् छत्तीसगढ़ का समय मानक देशांतर के निकट का है। (अक्षांश देशांतर पर विस्तृत अध्ययन हेतु भूगोल में प्रयोगात्मक कार्य अध्याय 3 अक्षांश देशांतर देखें)

छत्तीसगढ़ राज्य का भौगोलिक क्षेत्रफल 1,35,191 वर्ग किलोमीटर है जो भारत के कुल क्षेत्र का 4.14 प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह भारत का 10वाँ बड़ा राज्य है। छत्तीसगढ़ राज्य की उत्तर से दक्षिण लम्बाई 700 किलोमीटर और पूर्व से पश्चिम चौड़ाई 435 किलोमीटर है। राज्य के उत्तर में उत्तर प्रदेश, उत्तर–पूर्व में झारखंड, पूर्व में ओडिशा, दक्षिण में तेलंगाना और आंध्र प्रदेश, दक्षिण–पश्चिम में महाराष्ट्र, पश्चिम तथा उत्तर–पश्चिम में मध्यप्रदेश राज्य स्थित है। इस प्रकार यह चारों ओर से स्थल से घिरा हुआ है। सागर तट बंगाल की खाड़ी से इसकी दूरी लगभग 400 कि.मी. है। राज्य प्रशासनिक रुप से 5 संभाग 27 जिलों और 150 तहसीलों में विभाजित है। नया तहसील बड़ा बचेली (दन्तेवाड़ा) 2017 में बना।

निम्नांकित बिन्दुओं पर चर्चा कीजिए –

1.छत्तीसगढ़ के उत्तरी भाग से यदि आर्कटिक वृत (66030′ उत्तरी अक्षांश) गुजरता तो क्या होता?

2.मानक देशांतर क्या होता है? रायपुर और अहमदाबाद दोनों में से पहले सूर्योदय कहाँ होगा और दोनों में कितने समय का अंतर होगा?

3.छत्तीसगढ़ के राजनैतिक मानचित्र को देखकर अपने जिले का अक्षांश और देशांतरीय विस्तार का अंदाजा लगाएँ।

प्रायोजना –

मानचित्र क्र. 8.1 और एलटस में छ.ग. के राजनैतिक मानचित्र की सहायता से निम्नांकित प्रश्नों के आधार पर प्रायोजना कार्य पूर्ण कीजिए–

1. सबसे पहले बने जिलों के नाम लिखिए?

2. 2005 तथा 2012 में बने जिलों की सूची बनाइए?

3. स्वतंत्रता के पूर्व छत्तीसगढ़ के बने जिलों के नाम लिखिए?

4. मानचित्र 8.1 को देखकर अंतर्राज्य सीमा को स्पर्श नहीं करने वाले जिलों के नाम लिखिए?

5. क्षेत्रफल की दृष्टि से छ.ग. का सबसे बड़ा और सबसे छोटा जिला कौन सा है?

2. छ.ग. के जिलों में पश्चिम में स्थित स्थलों की सूची आकर्षक चित्रों और विशेषताओं के साथ तैयार कीजिए।

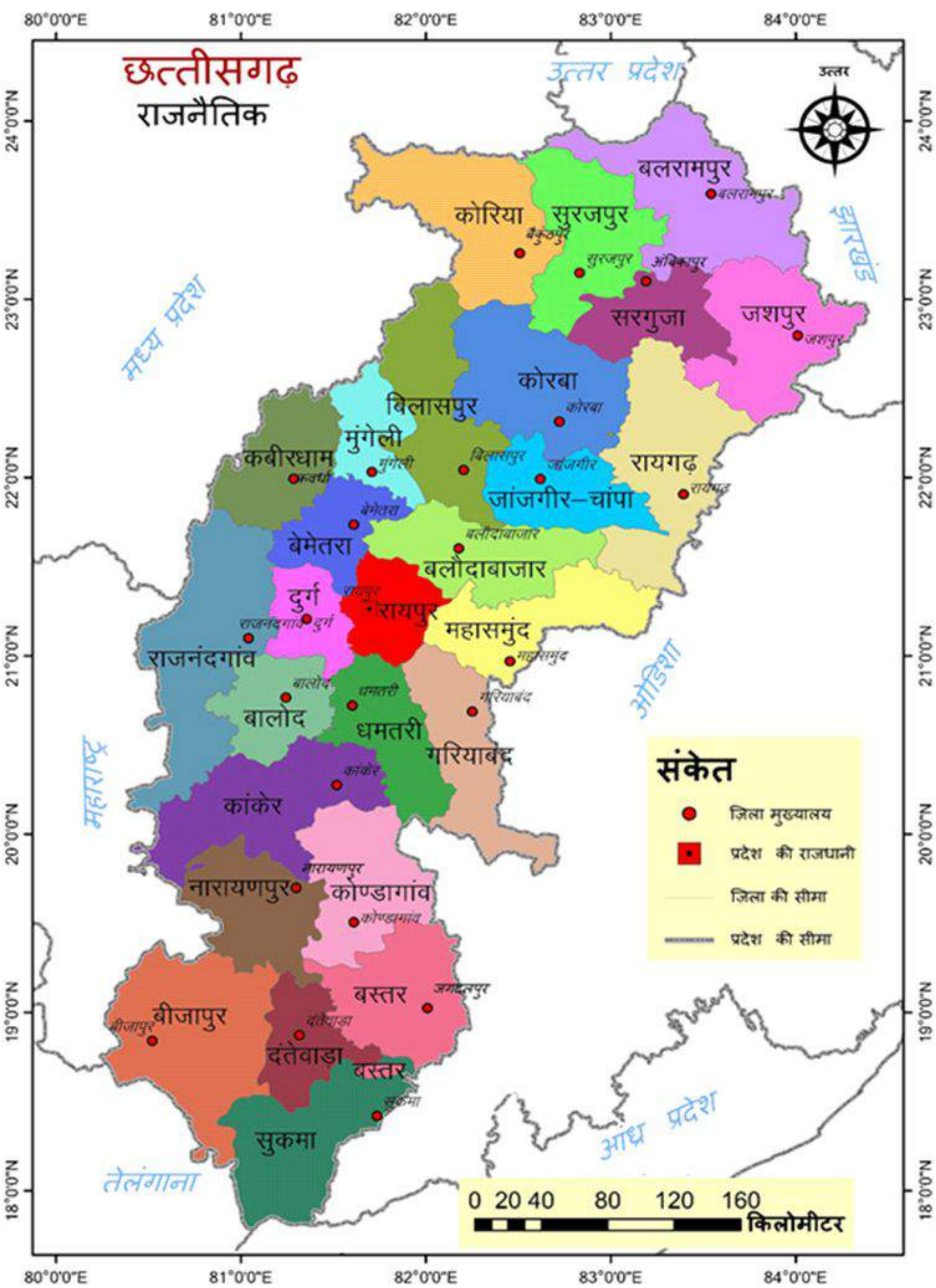

मानचित्र क्र.8.1 छ.ग.राजनैतिक

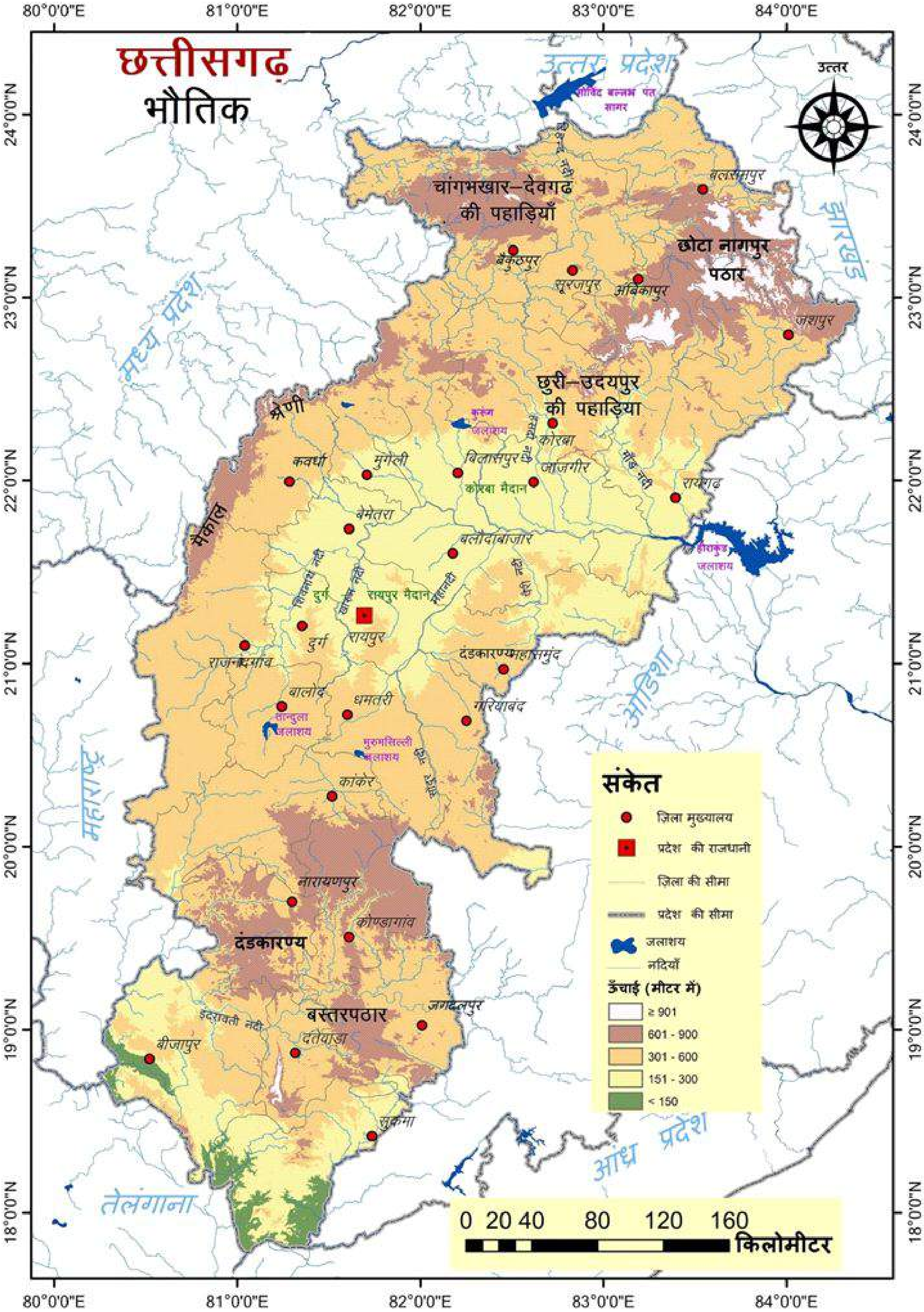

मानचित्र क्र.8.2 छ.ग.भौतिक स्वरुप एवं अपवाह तंत्र

छत्तीसगढ़ का भौतिक स्वरूप

अध्याय 2 में आपने भारत के भौतिक विभाग का अध्ययन किया है जहाँ भू आकृतिक दृष्टिकोण से भारत को छः भौतिक विभागों में विभाजित किया गया है। इस विभाजन को चित्र 2.2 (भारतः भौतिक) में देखिए और यह अनुमान लगाइए कि भारत के छः भौतिक विभागों में छत्तीसगढ़ किस प्राकृतिक विभाग में है?क्या छत्तीसगढ़ को भी भौतिक विभागों में विभाजित किया जा सकता है? यदि छत्तीसगढ़ को भौतिक विभागों में विभाजित किया जाता है तो उसके क्या आधार होंगे? भारत के भौतिक विभाजन के क्या आधार हैं?

भारत के भौतिक विभागों पर गौर करें तो छत्तीसगढ़ प्रायद्वीपीय पठार का भाग है। क्या प्रायद्वीपीय पठार का हिस्सा होने के कारण छत्तीसगढ़ में एक समान भू आकृति होगी? नहीं ऐसा नहीं है, क्योंकि वृहद् पठार में भी समतल मैदान और पहाड़ी पाए जा सकते हैं। छत्तीसगढ़ भारत के वृहद् भौतिक विभाजन में अवश्य ही प्रायद्वीपीय पठार का हिस्सा है किंतु लघु विभाजन में यहाँ की भू आकृति एक समान नहीं है। जिसे मानचित्र 8.2 में देखा जा सकता है। उत्तरी भाग में बघेलखण्ड और छोटानागपुर के पठार का भाग है। मध्यवर्ती भाग में महानदी का मैदान है। दक्षिणी भाग में दण्डकारण्य की उच्च भूमि है। इसी प्रकार छत्तीसगढ़ के उक्त वर्णित तीन में किसी भी प्रदेश का पुनः लघु विभाजन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए उत्तरी भाग में पहाड़ी भूमि की ऊँचाई 600 से 900 मीटर है किंतु उससे लगे बेसीन की ऊँचाई 300 से 600 मीटर है। वृहद विभाजन को लघु रुप में देखें तो वहाँ भी भूआकृतिक विविधताएँ होती हैं। भूआकृतिक विविधताओं के आधार पर छत्तीसगढ़ को चार भौतिक विभागों में विभाजित किया जा सकता है।

1.पूर्वी बघेलखण्ड का पठार :

यह प्रदेश छोटानागपुर पठार का हिस्सा है जो छत्तीसगढ के उत्तर– पश्चिम भाग में स्थित है। पठार की औसत ऊँचाई 600 से 700 मीटर तक है। यह ऊँचा–नीचा और कटा–फटा प्रदेश है। इसमें कैमूर पर्वत श्रृंखला का भाग चांगभखार–देवगढ़ की पहाडी है जहाँ हसदो नदी का उदगम है।इसी में रामगढ़ की पहाड़ी है जिसमें सीताबेंगरा,जोगीमारा और लक्ष्मण बेंगरा गुफाएँ हैं। सीताबेंगरा में विश्व की प्रसिद्ध नाट्यशाला स्थित है यहाँ देवदासी नृत्यांगना और देवदत्त नामक नर्तक की प्रेमगाथा का वर्णन है। बघेलखण्ड के पठार में कन्हार बेसिन, रिहन्द बेसिन, सरगुजा बेसिन,सोहागपुर बेसिन, हसदो माण्ड बेसिन प्रमुख हैं। यह पठार गंगा अपवाह तंत्र और महानदी अपवाह तंत्र के बीच विभाजक का कार्य करता है। कर्क रेखा इस प्रदेश के लगभग मध्य से गुजरती है।इस प्रदेश में वनों की अधिकता है। यहाँ लाल–पीली मिट्टी पायी जाती है। बघेलखण्ड पठार के भूगर्भ में गोंडवाना शैल है इसमें कोयले की अधिकता है। सिंगरौली, तातापानी, रामकोला चिरमिरी,विश्रामपुर,उमरिया,झिलमिली आदि में कोयला की खदानें हैं।

बघेलखण्ड के दक्षिण और महानदी मैदान के पश्चिमी भाग में छोटे संकरे क्षेत्र पर मैकाल श्रेणी का विस्तार है। दक्षिण में इसकी औसत ऊँचाई 700 मीटर है किंतु उत्तरी भाग में इसकी ऊँचाई बढ़ती जाती है। इसकी सर्वोच्च चोटी बदरगढ़ (1176 मी.) है। यह श्रेणी महानदी और नर्मदा के जलविभाजक का कार्य भी करती है। अमरकंटक से नर्मदा, सोन तथा जोहिला नदियों का उद्गम होता है। केशमर्धा, बृजपानी और चिल्फी घाटी इसी प्रदेश में पाए जाते हैं। यहाँ विभिन्न प्रकार के चट्टान के साथ लौह अयस्क और बाक्साइट भी पाए जाते हैं। मैकाल के उत्तरी भाग में पेण्ड्रा लोरमी का पठार है जिसका अध्ययन इसी प्रदेश के अंतर्गत किया जाता है इसकी अधिकतम ऊँचाई 821 मी. है।

2. जशपुर सामरी पाट प्रदेश : पाट एक उच्च समतलीय व पठारी स्थलाकृति प्रदेश है। इसका शीर्ष भाग सपाट पार्श्व भाग में सीढ़ीनुमा ढाल है। यह छत्तीसगढ़ के उत्तर–पूर्वी भाग में स्थित है।इसकी ऊँचाई समुद्र सतह से 1000 मीटर है।अत्यन्त प्राचीन

गोंडवाना और अवर्गीकृत रवेदार नीस चट्टानों से इसकी रचना हुई है। इस पाट प्रदेश में मैनपाट, जारंगपाट, सामरीपाट,जशपुरपाट आदि प्रमुख पाट हैं। सामरीपाट में छत्तीसगढ़ की सबसे ऊँची चोटी गौरलाटा (1225 मी.)स्थित है।यहाँ की जलवायु उष्ण आर्द्र एवं

चित्र क्र.8.1 पाट प्रदेश का दृश्य

शुष्क है। यहाँ जलोढ़ मिट्टी और उष्ण पर्णपाती वन पाये जाते हैं।

पाट प्रदेश में अवस्थित मैनपाट (1152 मी.) यहाँ की विशिष्ट शीत जलवायु के लिए प्रसिद्ध है इस कारण इसे छत्तीसगढ़ का शिमला कहा जाता है। यह सरगुजा जिले में स्थित है।यहाँ तिब्बती शरणार्थियों को बसाया गया है। जारंगपाट में सबसे बड़ा बॉक्साइट का भण्डार है। बाल्को इस्पात संयंत्र हेतु बॉक्साइट की आपूर्ति यहीं से होती है। इस प्रकार यह प्रदेश खनिज की दृष्टि से महत्पूर्ण क्षेत्र है।

3.महानदी का मैदान : इसे छत्तीसगढ़ मैदान के नाम से भी जाना जाता है। यह छत्तीसगढ़ राज्य के मध्य फैला एक विस्तृत मैदानी भाग है। इसके उत्तर में बघेलखण्ड, पश्चिम में मैकाल श्रेणी दक्षिण में बस्तर का पठार है। इस प्रकार यह तीन ओर से पहाड़ियों से घिरा कटोरानुमा भूआकृति है। इसका विस्तार लगभग 30 हजार वर्ग कि.मी. है। इस मैदान की ऊँचाई 150 से 300 मीटर के मध्य है किंतु सीमांत प्रदेशों में इसकी

चित्र क्र.8.2 महानदी मैदान में कृषि

ऊँचाई 300 मीटर से अधिक है। इसका ढाल पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर है। इसका धरातल कड़प्पा युगीन चूने की चट्टानों पर महानदी एवं उसकी सहायक नदियों के अपरदन के फलस्वरूप हुआ है। नदी बेसिन होने के कारण यह भूभाग छत्तीसगढ़ की कृषि का गढ़ है जहाँ मुख्यतः धान की फसल की जाती है। महानदी एवं उसकी सहायक नदियों में बांध बनाकर अब गर्मियों में भी धान की फसल ली जा रही है। इस प्रदेश में धान के वृहद् उत्पादन के कारण इसे धान का कटोरा भी कहा जाता है। कृषि विकास एवं समतल भू आकृति के कारण यहाँ सघन बसाहट है। इस मैदान को क्षेत्रीय स्तर पर छोटे छोटे भागों में भी जाना जाता है जैसे बिलासपुर का मैदान, हसदो मांड का मैदान, शिवनाथ पार का मैदान, महानदी शिवनाथ दोआब और महानदी पार क्षेत्र।

निम्नांकित बिन्दुओं पर चर्चा कीजिए –

1.छत्तीसगढ़ के मैदान में सर्वाधिक धान की फसल क्यों ली जाती है?

2. छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहा जाता है इसे भौतिक कारक से पुष्ट कीजिए?

4.दक्षिण का दण्डाकारण्य

महानदी के मैदान के दक्षिण में स्थित भाग को मानचित्र 8.2 में देखिए। यह भाग दण्डकारण्य के नाम से जाना जाता है। यहाँ की भूआकृति महानदी के

मैदान की तरह समतल नहीं है बल्कि यहाँ कहीं ऊँचे पहाड़ हैं तो कहीं उससे लगा हुआ बेसिन कहीं नदी घाटियाँ और उसके प्रपात हैं। इस प्रदेश में तीन मुख्य

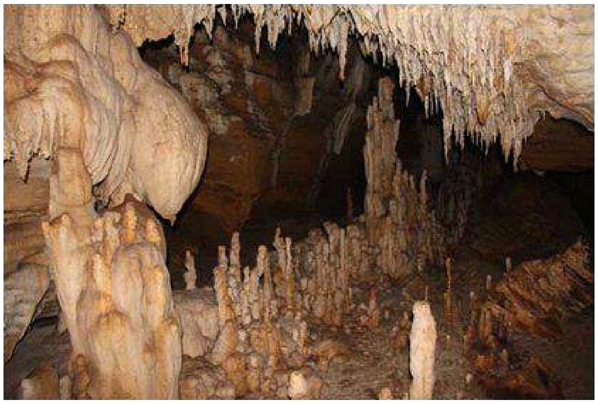

चित्र क्र.8.3 कुटुम्बसर गुफा

उच्च भूमि है जिसकी ऊँचाई 600 से 900 मीटर है। एक उच्च भूमि कांकेर से कोण्डागाँव के मध्य है जिसे उत्तर पूर्वी पठार भी कहते हैं, दूसरी उच्च भूमि इसके पश्चिम में अबूझमाड़ की पहाड़ियाँ हैं और तीसरी उच्च भूमि उत्तर पूर्वी पठार के दक्षिण में बस्तर का पठार है। इस प्रदेश का सर्वोच्च भाग बैलाडिला में है जिसकी ऊँचाई 1276 मीटर है। इन्हीं उच्च भूमि से लगा हुआ निम्न भूमि है जिसकी ऊँचाई 300 से 600 मीटर है जिसमें कांकेर बेसिन मुख्य है। इंद्रवती नदी के प्रवाह वाले निचले भाग में इस प्रदेश की ऊँचाई 300 मीटर से कम हो गई है। कुछ भागों में इसकी ऊँचाई 150 मीटर से भी कम है। इस निम्न भूभाग को बस्तर का मैदान कहते हैं। इस प्रकार इस प्रदेश में छत्तीसगढ़ की सबसे उच्च और निम्न दोनों प्रकार की भूमि पायी जाती है। यह प्रदेश सघन वनाच्छादित और दुर्गम भी है। जहाँ कई प्रसिद्ध और दर्शनीय स्थल हैं जिनमें कुटुम्बसर की गुफा, चित्रकोट और तीरथगढ़ जल प्रपात तथा अबूझमाड़ की पहाड़ियाँ मुख्य हैं। इस भाग का निर्माण धारवाड़ क्रम की चट्टानों से हुआ है। लौह अयस्क, बॉक्साइट, चूना पत्थर, टीन और अभ्रक यहाँ के मुख्य खनिज हैं। भारत का प्रसिद्ध लौह अयस्क खान बैलाडीला इसी प्रदेश में है। विश्व की उच्च कोटि का लोहा बैलाडीला से ही प्राप्त होता है।

निम्नांकित बिन्दुओं पर चर्चा कीजिए –

1. यदि संपूर्ण छत्तीसगढ़ की भूआकृति की ऊँचाई 300 मीटर हो और ढाल शून्य अंश हो तब क्या होगा?
2. महानदी के मैदान में जलप्रपात नहीं पाए जाते किंतु दक्षिण दण्डकारण्य, बघेलखण्ड और पाट पदेश में जलप्रपात पाए जाते हैं क्यों?
3. आप अपने आसपास की भू– आकृतियों का अवलोकन करें क्या वे एक समान हैं? इसके कारणों के बारे में कक्षा में सहपाठियों से चर्चा करें।

अपवाह तंत्र

अध्याय 3 में आपने अपवाह और भारतीय अपवाह तंत्र के बारे में अध्ययन किया। छत्तीसगढ़ राज्य में प्रवाहित होने वाली नदियाँ प्रायद्वीपीय पठारी भागों से निकलती हैं। यहाँ हिमालय की तरह बर्फ नहीं है इस कारण ये नदियाँ केवल वर्षा काल में जल से भरी होती हैं। ग्रीष्म ऋतु में इनमें इतना कम पानी होता है कि इन्हें पैदल पार किया जा सकता है। छत्तीसगढ़ के भूतल का ढाल, संरचना, प्रवाह प्रतिरूप एवं अनेक नदियों के उद्‌गम के कारण यहाँ विभिन्न प्रवाह तंत्रों का निर्माण हुआ है। छत्तीसगढ़ में विशेषकर निचली घाटियों में भारतीय प्रायद्वीप की भाँति अपवाह प्रणाली का पूर्ण विकास हुआ है। छत्तीसगढ़ में भारत के प्रमुख अपवाह तंत्रों में से चार अपवाह तंत्र पाए जाते हैं।

1. महानदी अपवाह तंत्र

महानदी छत्तीसगढ़ की प्रमुख नदी है। महानदी पूर्वी उच्च भूमि में स्थित सिहावा पहाड़ी के निकट फरसिंया से निकलकर उत्तर–पश्चिम की ओर बहती हुई कांकेर जिले में प्रवेश करती है। आगे कुछ दूर बहने के पश्चात् यह नदी उत्तर–पूर्व की ओर मुड़कर धमतरी जिले में प्रवेश करने के पश्चात् रायपुर जिले में प्रवेश करती है। शिवरीनारायण के समीप शिवनाथ के

संगम तक इसकी दिशा उत्तर–पूर्व रहती है। इसके पश्चात् यह पूर्व की ओर बहती हुई ओडिशा में प्रवेश कर जाती है। राजिम में महानदी, पैरी और सोंढुर नदियों का संगम है जिसे छत्तीसगढ़ का प्रयाग कहा जाता है।छत्तीसगढ़ के लगभग 58 प्रतिशत क्षेत्र के जल का संग्रहण महानदी क्रम की नदियाँ करती हैं। महानदी की कुल लम्बाई 851 कि.मी. है जिसमें यह छत्तीसगढ़ में 286 कि.मी.की दूरी तय करती है। शिवनाथ महानदी की प्रमुख सहायक नदी है जिसका उद्‌गम पानाबरस पहाड़ी (राजनांदगाँव) से हुआ है। हसदो महानदी की दूसरी बड़ी सहायक नदी है जिसका उद्‌गम कैमूर की पहाड़ी से हुआ है। इसके अतिरिक्त खारुन, जोंक, पैरी, माण्ड, ईब, केलो, बोरई, दूध आदि इस तंत्र की प्रमुख सहायक नदियाँ हैं। इनके अपवाह क्षेत्र में महानदी के मैदान का विस्तार है जो राज्य में कृषि के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में कई स्थानों पर नदियों को बांधकर जलाशय का निर्माण किया गया है जिससे उद्योग और कृषि भूमि की सिंचाई हेतु जल की आपूर्ति होती है। इस अपवाह प्रदेश में पहाड़ियों से उतरती नदियों के झरनें, नदियों के संगम स्थल और मानव निर्मित जलाशय मनोरम दृश्य उपस्थित करते हैं जो पर्यटन के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

2. गोदावरी अपवाह तंत्र

गोदावरी नदी छत्तीसगढ में प्रवाहित नहीं होती बल्कि छत्तीसगढ़ की दक्षिण सीमा के समीप से यह प्रवाहित होती है। छत्तीसगढ़ में गोदावरी की सहायक नदियाँ प्रवाहित होती हैं इस कारण इसे गोदावरी अपवाह तंत्र के अंतर्गत रखा जाता है। छत्तीसगढ़ के लगभग 28 प्रतिशत जल के क्षेत्र वाला यह अपवाह तंत्र छत्तीसगढ़ का दूसरा सबसे बड़ा अपवाह तंत्र है। राज्य में इस प्रवाह की प्रमुख नदी इंद्रावती है। इंद्रावती नदी का उद्‌गम ओडिशा में स्थित पूर्वी घाट प्रदेश का रामपुर थुवामूल (कालाहांडी) नामक स्थान है। इंद्रावती नदी बस्तर पठार के मध्य में पूर्व से पश्चिम की ओर प्रवाहित होते हुए भोपालपटनम के पास सिरोंचा में गोदावरी नदी से मिलती है। छत्तीसगढ़ में इंद्रावती की कुल लंबाई 264 कि.मी. है। इस प्रदेश में गोदावरी की अन्य सहायक नदी सबरी है जो बस्तर के दक्षिण पूर्व

चित्र क्र. 8.4 चित्रकोट जलप्रपात

सीमा में बहती हुई कुनावरम के निकट गोदावरी में मिल जाती है। गोदावरी तंत्र में अन्य नदियाँ कोटरी, चिन्ता, कोहका, बाघ, डंकनी और शंखनी है। इंद्रावती नदी इस प्रदेश में प्रसिद्ध चित्रकोट जल प्रपात का निर्माण करती है। राज्य में एक मात्र जल परिवहन की सुविधा सुकमा से कुनावरम तक (36 कि.मी.) इसी अपवाह तंत्र में है।

3. गंगा अपवाह तंत्र :

आपने अध्याय तीन में गंगा नदी अपवाह तंत्र में पढ़ा कि इसमें हिमालयी और प्रायद्वीपीय दोनों अपवाह तंत्र की नदियाँ हैं। गंगा अपवाह की प्रायद्वीपीय सहायक नदियों में सोन एक प्रमुख नदी है जिसका अपवाह क्षेत्र उत्तर छत्तीसगढ़ के सरगुजा, सूरजपुर, कोरिया, बलरामपुर, जशपुर आदि जिले में है। इस अपवाह से राज्य के 13 प्रतिशत जल का संग्रहण होता है। यहाँ सोन की सहायक नदियाँ रिहंद, कन्हार, गोपद, बनास आदि प्रवाहित होती हैं। रिहंद का उद्‌गम

मैनपाट के निकट मातरिंगा पहाड़ी है। अपने उद्‌गम से यह उत्तर की ओर बहती हुई सरगुजा बेसिन की रचना करती है। इसकी लंबाई 145 कि.मी. है। कन्हार नदी जशपुर के खुड़िया पहाड़ी से निकलती है और उत्तर की ओर बहती हुई सोन में मिल जाती है। रिहंद नदी पर उत्तरप्रदेश में गोविंदबल्लभ पंत सागर (रिहंद बांध) बनाया गया है।

4. नर्मदा अपवाह तंत्र

छत्तीसगढ़ के पश्चिमी सीमा क्षेत्र में लगभग 1 प्रतिशत जल का संग्रहण नर्मदा अपवाह प्रणाली की नदियों के द्वारा होता है। राजनांदगाँव एवं कबीरधाम जिलों में बहने वाली बंजर, टाँडा एवं उसकी सहायक नदियाँ नर्मदा अपवाह तंत्र के अन्तर्गत हैं। इन नदियों का प्रवाह उत्तर–पश्चिम की ओर है। छत्तीसगढ़ में नर्मदा अपवाह तंत्र की नदियों का प्रवाह क्षेत्र लगभग 710 वर्ग कि.मी. है। मैकाल श्रेणी महानदी अपवाह तंत्र को नर्मदा अपवाह तंत्र से अलग करती है। ये नदियाँ भी छोटी हैं तथा ग्रीष्म काल में सूख जाती हैं। ब्राह्मणी (शंख) अपवाह क्षेत्र छत्तीसगढ़ के उत्तर पूर्वी भाग में जशपुर जिले के छोटे से भाग में है।

मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में नदियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसके महत्व का प्रमाण नदी घाटियों के नाम पर ही उस सभ्यता का नामकरण हुआ है जैसे नील नदी घाटी की सभ्यता, सिन्धु घाटी की सभ्यता इत्यादि। जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। किसी क्षेत्र का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा औद्योगिक विकास में नदियों की प्रमुख भूमिका होती है। किसी भी प्रदेश का अपवाह तंत्र उसकी संरचना, भूभाग का ढ़ाल, जल प्रवाह का वेग और आकार आदि बातों पर निभर्र करता है। ये नदियाँ अपने प्रवाह के साथ विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण तत्व लाकर अपने तटों पर बिछा देती हैं इन अपवाहों से निर्मित मैदान कृषि के लिए वरदान है।

छत्तीसगढ़ में पर्याप्त विकसित अपवाह तंत्र उपलब्ध है जो यहाँ के उच्च वन, भू–पर्पटी से प्रभावित है। यहाँ नदी प्रणाली पर आधारित सिंचाई तंत्र के विकास की पूर्ण संभावना है। सिंचाई के साथ जल विद्युत शक्ति का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है जो कि ऊर्जा का सस्ता और पर्यावरण के लिए अनुकूल साधन है। प्रदेश की कई नदियों पर रमणीय और धार्मिक स्थल स्थित हैं। नदियों के द्वारा प्रदेश में विकसित पर्यटन उद्योग की अच्छी संभावना है। छत्तीसगढ़ पर्यटन विकास विभाग द्वारा प्रतिवर्ष राजिम में आयोजित होने वाला नवकुंभ मेला इसका एक अच्छा उदाहरण है।

निम्नांकित बिन्दुओं पर चर्चा कीजिए –

1. नदियों पर बांध की आवश्यकता क्यों पड़ी? इसके क्या लाभ और हानि हैं?

2. यदि नदियाँ न हों तो हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

जलवायु

अध्याय 4 में आपने भारत की जलवायु का अध्ययन किया है, उस अध्याय में दिए गए मानचित्रों को गौर से देखें और उसके आधार पर छत्तीसगढ़ की जलवायु का अंदाजा लगाएं। किसी भी स्थान के जलवायु विश्लेषण में उसके घटकों का विश्लेषण आवश्यक है। तापमान, वर्षा, वायुदाब, आर्द्रता, पवन आदि जलवायु के मुख्य घटक हैं। इन्हीं घटकों के माध्यम से जलवायु का निध ार्रण किया जाता है। इसमें तापमान और वर्षा दो मुख्य घटक हैं जिसे जलवायु विश्लेषण में प्रमुख आधार माना

जाता है। कोपेन ने अपने जलवायु वर्गीकरण में तापमान और वर्षण को आधार माना है। चित्र 4.13 को गौर से देखिए कि कोपेन के जलवायु वर्गीकरण के अनुसार छत्तीसगढ़ किस जलवायु प्रदेश में है? तापमान और वर्षा दो प्रमुख घटक के आधार पर हम छत्तीसगढ़ की जलवायु को समझने का प्रयास करेंगे।

तापमान : जरा सोचिए वर्षभर हमारी जीवन शैली में कब–कब और क्या परिवर्तन होता है,इस परिवर्तन का क्या कारण है? क्या हमारे निवास क्षेत्र में वर्षभर एक जैसा तापमान होता है? क्या एक ही समय में हमारे निवास स्थान से दूसरे स्थान पर तापमान में अंतर होता है? जैसा कि हमें ज्ञात है राज्य के उत्तरी भाग से कर्क रेखा गुजरती है। मार्च में सूर्य उत्तरायण होने के कारण इसकी किरणें भारतीय उपमहाद्वीप में सीधी पड़ने लगती हैं। परिणाम स्वरूप छत्तीसगढ़ के तापमान में भी वृद्धि होने लगती है। मई माह में यह औसत तापमान उच्चतम पर होता है। सर्वाधिक तापमान महानदी के मैदानी भागों में दर्ज किया जाता है। उत्तरी पहाड़ी पाट प्रदेश, मैकाल श्रेणी और दण्डकारण्य में तापमान मैदानी क्षेत्र की अपेक्षा कम होता है। इस प्रदेश में ऊँचाई एवं वनावरण का प्रभाव तापमान पर स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है। जून में मानसून के आगमन से तापमान में गिरावट आने लगती है। जुलाई से अक्टूबर तक तापमान लगभग स्थिर रहता है किंतु नवंबर से तापमान में गिरावट होने लगती है क्योंकि सूर्य दक्षिणायण होने लगता है। यहाँ शीतऋतु में उत्तर भारत के उत्तरी भाग की तरह पश्चिमी विक्षोभ उत्पन्न होते हैं। उत्तर की ठंडी हवाओं के प्रभाव के कारण प्रदेश का तापमान एकाएक कम हो जाता है। दिसम्बर में प्रदेश का न्यूनतम तापमान पहाड़ी भागों पर स्थित पेण्ड्रा एवं जशपुर में अंकित किया जाता है। छत्तीसगढ़ में तापमान के कालिक वितरण में जहाँ सूर्य के उत्तरायण, दक्षिणायण, वर्षाकाल आदि का प्रभाव देखा जाता है उसी प्रकार स्थानिक वितरण में समुद्र से ऊँचाई, अक्षांश, वर्षाकाल, वनावरण आदि का प्रभाव भी स्पष्ट रुप से देखा जाता है। इसके परिणाम चित्र आरेख 8.1 में देख सकते हैं।

आरेख 8.1.....

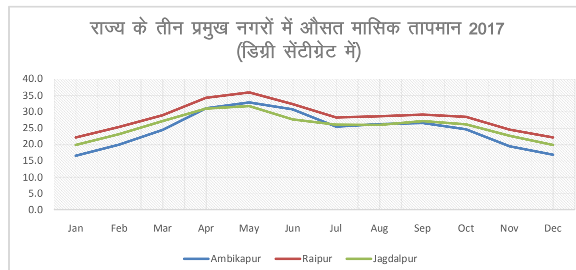

Source:- छ.ग. मौसम विभाग 2017

आरेख 8.1 और 8.2 के आधार पर निम्नांकित बिंदुओं पर चर्चा करें –

1. ग्राफ में मई की तुलना में जुलाई में तापमान कम क्यों है?
2. अंबिकापुर, रायपुर और जगदलपुर को तीन ऋतुओं में विभाजित किया जाए तो उन जिलों में कौन सी ऋतु किस माह में होगी?
3. ग्राफ के अनुसार किस स्थान पर सबसे पहले अधिक समय तक वर्षा होती है?
4. इन तीन स्थानों में से कहाँ की जलवायु आपके निवास के लिए बेहतर है?

आरेख 8.2

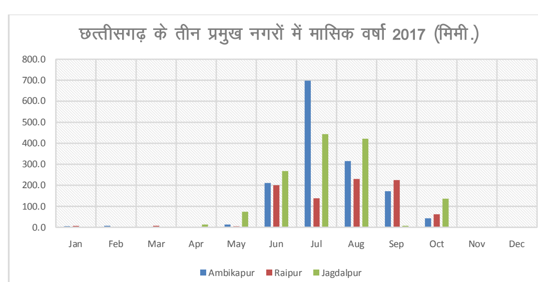

Source:- छ.ग. मौसम विभाग 2017

वर्षा : किस माह में कृषि कार्य की अधिकता रहती है? सिंचाई की अत्यंत कम आवश्यकता होती है? चारों ओर हरियाली छा जाती है........? इन प्रश्नों के उत्तर चित्र आरेख 8.2 से प्राप्त कर सकते हैं इससे स्पष्ट है कि जून से सितम्बर माह तक उच्च वर्षा होती है। छत्तीसगढ़ प्रदेश में वर्षा मानसून के आगमन के साथ आरंभ होती है। यहाँ मध्य जून के आसपास मानसून का आगमन होता है। मानसून का आगमन शेष भारत की तरह छत्तीसगढ़ के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि राज्य की कृषि व्यवस्था का आधार मानसूनी वर्षा ही है। राज्य में जनवरी से मई तक बहुत निम्न (लगभग नगण्य) वर्षा होती है किन्तु जून में मानसून के आगमन से वर्षा में एकएक वृद्धि हो जाती है। यह वृद्धि जुलाई और अगस्त तक जारी रहती है। सितम्बर के अंतिम दिनों में मानसून का वेग कम होने लगता है तथा वर्षा की मात्रा में कमी आने लगती है। नवंबर दिसंबर में पुनः वर्षा नगण्य हो जाती है। इस प्रकार यहाँ जून से सितंबर माह वर्षा काल का होता है इसे वर्षा ऋतु भी कहते हैं इस माह में वर्ष के कुल वर्षा का 90 प्रतिशत से अधिक वर्षा होती है।

निम्नांकित बिन्दुओं पर चर्चा कीजिए :–

1. सूर्य के उत्तरायण और दक्षिणायन को समझाइए? इसका तापमान से क्या संबंध है?
2. यदि वर्षा न हो तो जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

परियोजना कार्य : जशपुर, बिलासपुर और दंतेवाड़ा के मासिक औसत तापमान और वर्षा के आंकड़ों का संकलन कर ग्राफ पेपर पर आरेख तैयार करें और तीनों स्थानों के तापमान और वर्षा का तुलनात्मक वर्णन कीजिए।

प्राकृतिक वनस्पतिः

छत्तीसगढ़ वन सम्पदा की दृष्टि से समृद्ध राज्य है। वन क्षेत्रफल की दृष्टि से यह देश में चौथे स्थान पर है। भारत के कुल वन क्षेत्रफल का 12.2 प्रतिशत छत्तीसगढ़ में है। राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 44.2 प्रतिशत भाग वनों से आच्छादित है। किंतु वनों के वितरण में प्रादेशिक भिन्नता पाई जाती है। एक ओर दुर्ग और बेमेतरा जिलों में वन क्षेत्र लगभग नगण्य है तो दूसरी ओर नारायणपुर और बीजापुर में 75 प्रतिशत से अधिक भूमि पर वन हैं। दुर्ग एवं बेमेतरा में वन क्षेत्र नगण्य होने का यह आशय नहीं है कि वहाँ कोई वनस्पति अथवा पेड़ पौधे नहीं है, यहाँ भी मानवरोपित वनस्पतियों का विस्तार है किंतु वन क्षेत्र नगण्य है। राज्य में वनों का विस्तार मुख्यतः पहाड़ी पठारी भागों में है जिसमें वनों का सर्वाधिक विस्तार दक्षिण दण्डाकारण्य प्रदेश में है।वन घनत्व की दृष्टि से सर्वाधिक वन क्षेत्र दंतेवाड़ा जिले में और सबसे कम वन क्षेत्र जांजगीर चाँपा जिले में है। इसके अतिरिक्त देवगढ़–चांगभखार पहाड़ी, पाट प्रदेश, पेण्ड्रा लोरमी और मैकाल श्रेणी में वनों का विस्तार लगभग 50 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र पर है।

चित्र क्र. 8.5 छत्तीसगढ़ के वन

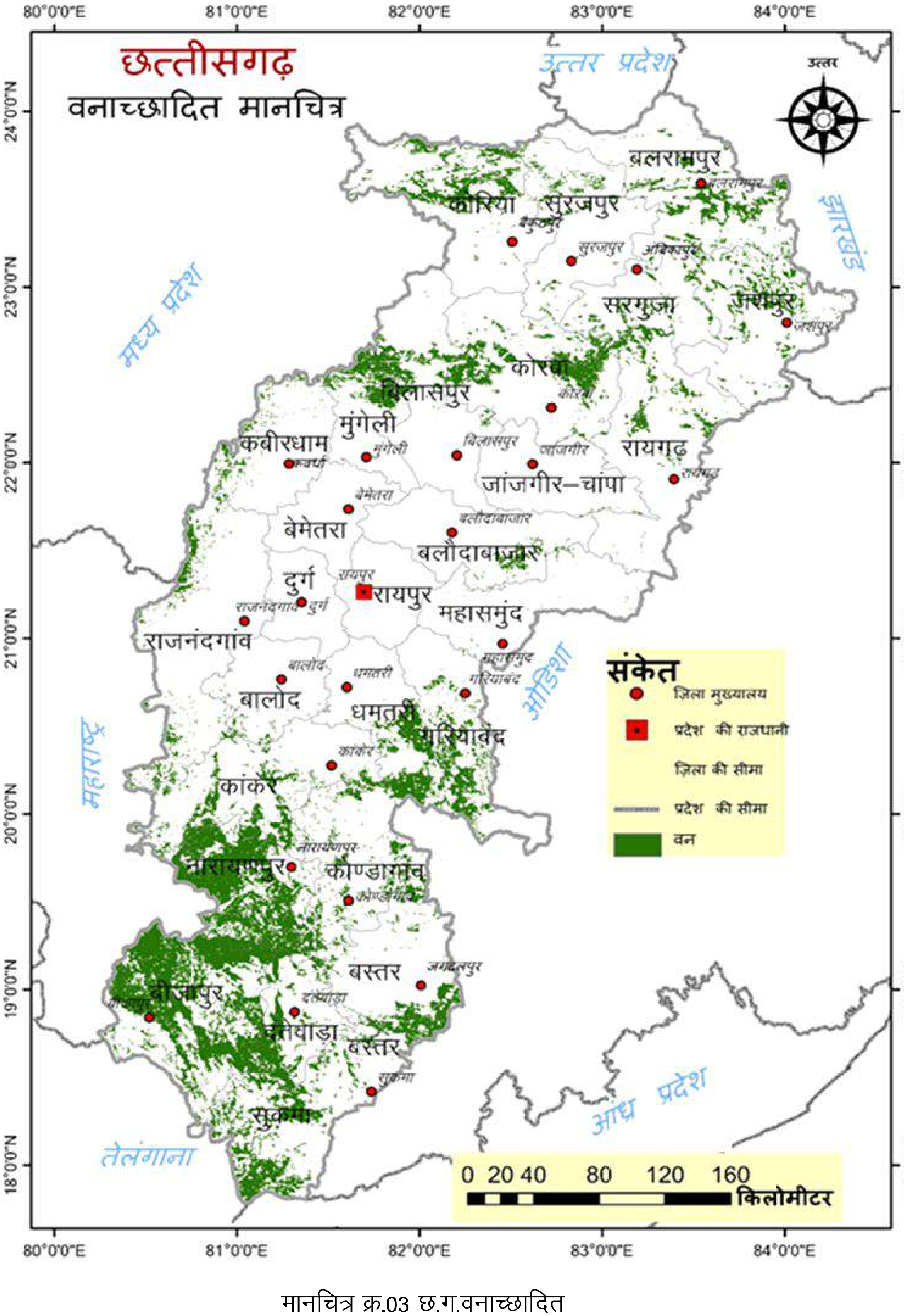

मानचित्र क्र.03 छ.ग.वनाच्छादित

महानदी के मैदान और बेसिन में वनों का विस्तार कम पाया जाता है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि इस भाग में वनस्पतियों को कृषि भूमि विस्तार के लिए नष्ट किया गया हो। आज निरंतर वनों की सघनता और उसके क्षेत्र में कमी हो रही है। पर्यावरणीय संतुलन की दृष्टि से इसे हमें बचाए रखने और निरंतर रोपित करने की आवश्यकता है।

मानचित्र अध्याय 5 (5.2) भारत प्राकृतिक वनस्पति से यह स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ में उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वनों का विस्तार है। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इन वनों के वृक्षों की पत्तियाँ वर्ष में एक बार झड़ जाती हैं। इन वनों का लघु विभाजन उष्ण कटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वन और उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन है।

1. उष्ण कटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वन – ये वन उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं जहाँ औसत वर्षा 100 से 150 से.मी. के मध्य होती है। इन वनों से मुख्यतः वनोपज एवं लकड़ी दोनों प्राप्त होते हैं। इनमें साल, सागौन, बाँस की बहुलता के साथ बीजा, जामुन, महुआ, साजा, हर्रा आदि भी पाए जाते हैं। ये वन दक्षिण सरगुजा जिले तथा जशपुर जिले के तपकरा परिक्षेत्र में है। बिलासपुर, रायपुर, बस्तर तथा नवागढ़ में भी ऐसे वन पाए जाते हैं। राज्य में 51.55 प्रतिशत वन इस श्रेणी में है।

2. उष्ण कटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन – ये वन अपेक्षाकृत कम वर्षा (25 से 75 से.मी.) वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। ये वन प्रमुखतया वनोपज से संबंधित हैं। इन वनों से इमारती लकड़ी भी प्राप्त होती है। इनमें बबूल, हर्रा, पलाश, तेंदू, धौरा, शीशम, हल्दू, सागौन, शिरिश आदि की बहुलता है। ये वन रायगढ़, जशपुर, उत्तर पूर्वी बिलासपुर, रायपुर, धमतरी तथा मैनपुर में पाए जाते हैं। राज्य में 47.89 प्रतिशत वन इसी श्रेणी के हैं।

वनों का प्रशासकीय आधार पर वितरण :

प्रशासकीय आधार पर वनों को तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है–आरक्षित वन, संरक्षित वन और अवर्गीकृत वन। आरक्षित वन वे होते हैं जहाँ लकड़ी काटना और पशुचारण प्रतिबंधित रहता है। संरक्षित वनों में प्रशासकीय देखरेख में लकड़ी काटना और पशुचारण किया जा सकता है। अवर्गीकृत वन लकड़ी काटने और पशुचारण के लिए खुले होते हैं।

आरेख 8.3

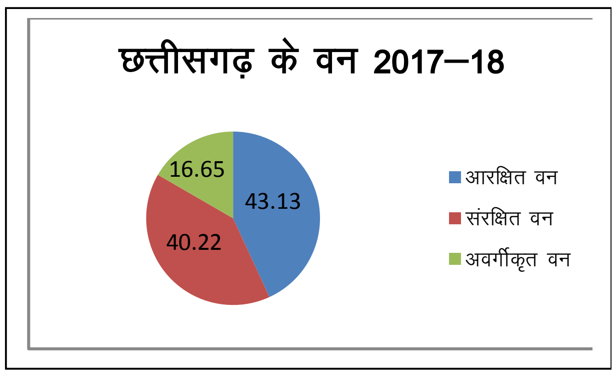

स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण,छ.ग.शासन,वन विभाग 2017–18।

निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार कीजिए :–

1. आरेख 8.3 के अनुसार सर्वाधिक वन किस प्रकार के हैं और कितना प्रतिशत है।

2. आरेख 8.3 में अनुसार सबसे कम वन किस प्रकार के हैं और कितना प्रतिशत है।

पादप संरचना आधारित वनों का वर्गीकरण

बाँस वन

साल वन 40.56 प्रतिशत

बस्तर साल वनों का द्वीप है कोमलनार और मानार क्षेत्र का साल वृक्ष नेपाल की तराई में पाये जाने वाले वृक्षों से ऊँचे होते हैं। जशपुर बिलासपुर, गरियाबंद आदि क्षेंत्रों में भी ये वन पाये जाते हैं।

साल वन

बाँस वन 6.50 प्रतिशत

रायगढ़, घरघोड़ा, लैलुंगा, खरसिया के मोटे बाँस कागज कारखानों में उपयोग में लाये जाते हैं।

प्रजाति बहुलता के आधार पर वनों का वर्गीकरण

सागौन वन 9.42 प्रतिशत

आर्द्र और शुष्क दोनों प्रकार के वन नारायणपुर, बीजापुर, दंतेवाड़ा, भानुप्रतापपुर आदि क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

मिश्रित वन

मिश्रित वन 43.52 प्रतिशत

साल सागौन के अलावा पर्णपाती वृक्ष तेन्दु, बीजा, चार, बबुल, महुआ, आदि पाये जाते हैं। सघन वनों में वृक्षों के नीचे लताएँ, छोटे पौधे और अनेक प्रकार की घास भी उगती है जो रस्सी बनाने के काम आती है।

सागौन वन

छत्तीसगढ़ राज्य की जीवन शैली, कला, रहन–सहन, हस्तशिल्प के निर्धारण, संस्कृति निर्माण, अर्थतंत्र निर्माण और विकास की सभी बातों में वन और वन संपदा का स्पष्ट प्रभाव है। वनों का जीवन पद्धति निर्धारण में महत्वपूर्ण योगदान है। वनों के कारण भू–क्षरण का कम होना भू–पोषक तत्वों का संरक्षण, जल प्रवाह का नियंत्रण, पौधों और जीवों को संरक्षण मिलता है वहीं जैवविविधता का विकास संभव हुआ है। वनौषधियों की प्रचुरता,संरक्षण तथा वृहद् उत्पादन की संभावना को देखते हुए इसे वनौषधि राज्य घोषित किया गया है।प्रदेश का तेन्दुपत्ता अपनी गुणवत्ता और उत्पादन के लिए सम्पूर्ण देश में प्रसिद्ध है।यहाँ देश के उत्पादन का 17 प्रतिशत उत्पादन होता है।

निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार कीजिए –

1. प्राकृतिक वनस्पति हमारे लिए क्यों आवश्यक है?

2. राज्य के कुछ भागों में वन क्षेत्र अधिक और कुछ में कम पाए जाते हैं क्यों?

3. वनों की सघनता का आशय समझाइए?

मृदा

प्राकृतिक संसाधनों में मृदा सबसे महत्वपूर्ण एवं आधारभूत संसाधन है। मानव की मूलभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, वस्त्र, आवास आदि की पूर्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मृदा पर ही निर्भर है। मृदा का निर्माण जलवायु तथा चट्टानों के विखण्डन के फलस्वरूप होता है, इनमें अनेक प्रकार के रासायनिक तत्व, जीव–जन्तुओं व वनस्पतियों के अवशेष पाये जाते हैं।

विभिन्न जलवायु दशाओं तथा विभिन्न चट्टानों से बनी मिट्टियों और उर्वरा शक्ति में भिन्नता पाई जाती है। छत्तीसगढ़ भारत के दक्षिण पठार के अन्तर्गत आता है। यह प्राचीन भूखण्ड का भाग होते हुए भी इसमें मिट्टी का निर्माण और परिवर्तन जारी है। वनस्पति एवं कृषि के स्वरूप को निर्धारित करने वाले कारकों में मृदा अत्यधिक महत्वपूर्ण है। छत्तीसगढ़ में मुख्यतया पाँच प्रकार की मिट्टी पायी जाती है।

1. लाल पीली मृदा (मटासी)

इस मृदा की उत्पत्ति शुष्क एवं आर्द्र मौसम में क्रमशः चट्टानों में अपक्षय होने एवं प्राचीन गोंडवाना चट्टानों के टूटने से हुई है। पीली तथा लाल मृदा साथ–साथ मिलती है। पीला रंग फेरिक ऑक्साइड के जल संयोजन के कारण तथा लाल रंग लोहे के ऑक्साइड के कारण होता है। राज्य के 55 प्रतिशत भाग में यह मृदा पाई जाती है। इसका विस्तार मुख्यतः महानदी बेसिन में सरगुजा, कोरिया, बिलासपुर, मुंगेली, जांजगीर–चांपा, रायगढ़, जशपुर, बलौदाबाजार, भाटापारा, गरियाबंद, दुर्ग, बालोद, बेमेतरा, धमतरी, महासमुन्द, कोरबा, कांकेर, दंतेवाड़ा, सुकमा, बस्तर तथा कोंडागाँव जिलों में है। इसमें धान, मूँगफली, मक्का, बाजरा और दालों की कृषि की जाती है।

2. लाल बलुई मृदा

इस मृदा का रंग लाल होता है ग्रेनाइट और नीस इसकी जनक शैल है, इसकी प्रकृति अम्लीय है, इसका लाल रंग आयरन ऑक्साइड के कारण होता है। इसके कण महीन एवं रेतीले होते हैं। यह मृदा विस्तार क्रम में दूसरे नम्बर पर है। प्रदेश के 20 से 25 प्रतिशत भाग में यह मृदा पायी जाती है। यह मृदा बालोद, बेमेतरा, दुर्ग, राजनांदगाँव, पश्चिमी रायपुर, धमतरी, कांकेर, दंतेवाड़ा, सुकमा, बस्तर एवं कोंडागाँव में पाई जाती है। यह मृदा प्राकृतिक रूप से उर्वर नहीं होती, इसमें आर्द्रताग्राही गुणों का अभाव होता है। इस मृदा में कोदो, कुटुकी, ज्वार–बाजरा, मक्का, आलू, तिलहन आदि की कृषि की जाती है।

3. लाल दोमट मृदा :

यह मृदा आर्कियन ग्रेनाइट चट्टान समूह से निर्मित हुई है। क्लेयुक्त इस मृदा में लोहे युक्त चट्टानों का अंश अधिक होने के कारण इसका रंग ईट के समान लाल होता है। इसका विस्तार प्रदेश के 10 से 15 प्रतिशत भाग में है। इस मृदा का विस्तार बस्तर के कोंटा, दंतेवाड़ा तथा सुकमा तहसीलों में है। इस मिट्टी में धान तथा रबी के मौसम में सिंचाई की सुविधा से ज्वार–बाजरा, कोदो, तिलहन आदि की कृषि की जा सकती है।

4. लेटराइट मृदा : (भाटा)

स्थानीय भाषा में इसे भाटा मिट्टी कहा जाता है। बलुआ पत्थर डायोराइट, एण्टीनाइट्रोजन, एण्टीसाइट इसकी जनक शैलें हैं। यह मृदा लाल रंग की होती है। इसका निर्माण मिट्टी की उपरी उपजाऊ परत पर जलक्रिया (बहाव तथा निक्षालन) होने से होती है इसमें आयरन एवं एल्युमिनियम के ऑक्साइड प्राप्त होते हैं। चूना निक्षालन के द्वारा नीचे चला जाता है। यह मृदा प्रदेश के उच्च भागों में मुख्यतः जगदलपुर, साजा, बेमेतरा, छुईखदान, कबीरधाम, अम्बिकापुर, सीतापुर, सामरी, बगीचा आदि तहसीलों में पाई जाती है। रायपुर के भाटापारा के पास 600 वर्ग किलोमीटर में यह मिट्टी पायी जाती है। मैकाल पहाड़ी क्षेत्र दल्ली राजहरा की पहाड़ियों तथा मानपुर ब्लाक में भी पाई जाती है। इसमें आलू, तिल, ज्वार–बाजरा, कोदो, कुटकी आदि की कृषि की जाती है।

5. काली मृदा : (कन्हार)

यह मिट्टी बेसाल्ट नामक आग्नेय चट्टानों के ऋतु क्षरण से बनती है। लोहा तथा जीवांश की उपस्थिति के कारण मृदा का रंग काला होता है। प्रदेश में यह कन्हार मृदा के नाम से भी जानी जाती है इस मिट्टी का विस्तार पंडरिया, मुंगेली, कबीरधाम, राजिम, रायपुर, कुरूद व महासमुन्द तहसीलों में है। जलग्रहण की क्षमता अधिक होने के कारण कम सिंचाई की आवश्यकता होती है। धान की फसल के लिए यह सर्वोत्तम होती है। गेहूँ, चना, तिलहन, सोयाबीन, कपास, दालें आदि फसलों के लिए भी उपयुक्त है।डोरसा दोमट और कन्हार मिट्टी का संयुक्त रूप है।

इसके अतिरिक्त प्रदेश में कछारी एवं वनीय मृदा भी

पाई जाती है। कछारी मिट्टी रेतीली दोमट होती है जो नदी घाटियों के समीप पायी जाती है इसे जलोढ़ मृदा भी कहा जाता है। यह बहुत अधिक उपजाऊ होती है वनीय मृदा उच्च भूमि में पाई जाती है। इसमें पेड़ पौधे अच्छी तरह विकसित होते हैं।

छत्तीसगढ़ की भूमि उपयोग अध्ययन से ज्ञात होता है कि यहाँ के मृदा की भौतिक बनावट एवं मोटाई यहाँ की कृषि और उसके प्रादेशिक वितरण को प्रमुखता से प्रभावित करती है। मृदा की विशेषता के कारण यहाँ धान की फसल ली जाती है। मिट्टी की प्रकृति और भूमि उपयोग के मध्य गहरा संबंध होता है इसलिए कहा जाता है कि किसी प्रदेश की मिट्टी वहाँ की आर्थिक गतिविधियों को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण कारक होती है।

अभ्यास

1. नीचे दिए गए चार विकल्पों में से उपयुक्त उत्तर का चयन कीजिए।

1. निम्नांकित में से कौन रेखा छत्तीसगढ़ से गुजरती है?

(क) मकर रेखा (ख) कर्क रेखा (ग) विषुवत रेखा (घ) ग्रीनविच रेखा

2. मैनपाट किस प्रदेश में स्थित है?

(क) शिमला (ख) बघेलखण्ड (ग) छोटानागपुर का पठार (घ) दण्डकारण्य

3. निम्नांकित में से छत्तीसगढ़ में कौन अपवाह नहीं है?

(क) गंगा अपवाह (ख) गोदावरी अपवाह (ग) नर्मदा अपवाह (घ)कावेरी अपवाह

4. निम्नांकित में कौन कथन असत्य है?

(क) राज्य में मई माह का औसत तापमान सर्वाधिक होता है।

(ख) राज्य में लगभग 44 प्रतिशत भूभाग पर वनाच्छादित है।

(ग) लेटराइट मृदा को स्थानीय भाषा में भाटा मिट्टी कहते हैं।

(घ) महानदी का मैदान छत्तीसगढ़ का सबसे निम्न भाग है।

5. निम्नांकित कथन और कारण के आधार पर सही विकल्प का चयन कीजिए।

कथन : मई माह में छत्तीसगढ़ में ग्रीष्म ऋतु होती है।

कारण : मई माह में सूर्य उत्तरायण होता है।

(क) कथन और कारण दोनों सत्य है।

(ख) कथन और कारण दोनों असत्य है।

(ग) कथन सत्य है किंतु कारण असत्य।

(घ) कथन असत्य है किंतु कारण सत्य।

6. निम्नांकित कथनों पर विचार कीजिए।

अ. छत्तीसगढ़ में पर्णपाती वन पाए जाते हैं।

ब. छत्तीसगढ़ में जुलाई–अगस्त में सर्वाधिक वर्षा होती है।

स. सरगुजा बेसिन की ऊँचाई 600 से 900 मीटर है।

उपर्युक्त में कौन सही है?

(क) केवल अ (ख) अ और ब

(ग) अ और स (घ) केवल स

2..दिए गए तालिका के आधार पर निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

छत्तीसगढ़ के तीन स्थानों के अधिकतम और न्यूनतम तापमान (Temperature (°C)

स्थान	तापमान	Jan	Feb	Mar	Apr	May	Jun	Jul	Aug	Sep	Oct	Nov	Dec
अंबिकापुर	न्यूनतम	9.5	11.9	16.1	22.3	25.2	24.8	22.6	23.2	22.8	19.8	13.3	9.7
	अधिकतम	23.5	27.8	32.7	39.6	40.4	36.5	28.2	29.2	30.2	29.3	25.5	23.8
रायपुर	न्यूनतम	15.2	18.1	22.1	26.9	29.3	27.2	25.3	25.5	25.5	24.1	18.8	14.8
	अधिकतम	29.0	32.5	35.8	41.6	42.6	37.4	31.1	31.7	32.7	32.8	30.2	29.3
जगदलपुर	न्यूनतम	10.7	13.2	18.8	22.5	24.4	23.4	22.7	22.5	22.7	21.1	15.7	10.7
	अधिकतम	29.0	33.0	35.4	39.3	39.0	31.9	29.3	29.3	31.4	31.0	29.5	29.0

Source : छ.ग. मौसम विभाग 2017

1. तालिका के अनुसार राज्य का सबसे गर्म स्थान कौन है?
2. सबसे कम तापमान किस स्थान और किस माह में अंकित किया गया है?
3. सर्वाधिक तापांतर किस स्थान एवं माह में है?
4. जगदलपुर में सबसे कम तापान्तर किस माह में है?

निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. महानदी छत्तीसगढ़ की जीवनरेखा है? समझाइए?
2. आरक्षित वन और संरक्षित वन में क्या अंतर है?
3. दण्डकारण्य की क्या विशेषताएँ हैं?
4. लेटराइट मृदा की क्या विशेषताएँ हैं?
5. छत्तीसगढ़ में दिसंबर माह में तापमान न्यून किंतु मई माह में तापमान उच्च रहता है कारण बताइए?
6. छत्तीसगढ़ के मैदान में सर्वाधिक धान की फसल क्यों ली जाती है?
7. छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहा जाता है इसे भौतिक कारक से पुष्ट कीजिए?

संदर्भ ग्रंथ –

1. छ.ग. संदर्भ 2014 – जनसंपर्क विभाग छ.ग.
2. छ.ग. वृहद संदर्भ – संजय त्रिपाठी और श्रीमती चंदन
3. समग्र छ.ग. – छ.ग.राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी
4. प्रशासनिक प्रतिवेदन 2017–18 – छ.ग. शासन, वन विभाग

परिशिष्ट I

राज्य, उनकी राजधानी, जिलों की संख्या, क्षेत्रफल एवं जनसंख्या

क्र. सं.	राज्य	राजधानी	जिलों की संख्या	क्षेत्रफल वर्ग कि.मी. में	जनसंख्या
1.	आंध्र प्रदेश*	हैदराबाद	23	2,75,045	8,45,80,777
2.	अरुणाचल प्रदेश	ईटानगर	16	83,743	13,83,727
3.	असम	दिसपुर	27	78,438	3,12,05,576
4.	बिहार	पटना	38	94,163	10,40,99,452
5.	छत्तीसगढ़	रायपुर	18	1,35,192	2,55,45,198
6.	गोवा	पणजी	02	3,702	14,58,545
7.	गुजरात	गाँधी नगर	26	1,96,244	6,04,39,692
8.	हरियाणा	चंडीगढ़	21	44,212	2,53,51,462
9.	हिमाचल प्रदेश	शिमला	12	55,673	68,64,602
10.	जम्मू और कश्मीर	श्रीनगर	15	2,22,236	1,25,41,302
11.	झारखंड	राँची	24	79,716	3,29,88,134
12.	कर्नाटक	बंगलोर	30	1,91,791	6,10,95,297
13.	केरल	थिरुवनंथपुरम	14	38,852	3,34,06,601
14.	मध्य प्रदेश	भोपाल	50	3,08,252	7,26,26,809
15.	महाराष्ट्र	मुंबई	35	3,07,713	11,23,74,333
16.	मणिपुर	इम्फाल	09	22,327	28,55,794
17.	मेघालय	शिलांग	07	22,429	29,66,889
18.	मिज़ोरम	आइजौल	08	21,081	10,97,206
19.	नागालैंड	कोहिमा	11	16,579	19,78,502
20.	ओडिशा	भुवनेश्वर	30	1,55,707	4,19,74,218
21.	पंजाब	चंडीगढ़	20	50,362	2,77,43,338
22.	राजस्थान	जयपुर	33	3,42,239	6,85,48,437
23.	सिक्किम	गंगटोक	04	7,096	6,10,577
24.	तमिलनाडु	चेन्नई	32	1,30,060	7,21,47,030
25.	त्रिपुरा	अगरतला	05	10,486	37,73,917
26.	उत्तराखंड	देहरादून	13	53,483	1,00,86,292
27.	उत्तर प्रदेश	लखनऊ	71	2,40,928	19,98,12,341
28.	पश्चिम बंगाल	कोलकाता	19	88,752	9,12,76,115

स्रोत : http://india.gov.in (02.11.17)
* जनगणना 2011

नोटः जून 2014 में तेलंगाना भारत का 29वाँ राज्य बना। इसकी भी राजधानी हैदराबाद है।

परिशिष्ट II

केंद्र शासित राज्य, उनकी राजधानी, क्षेत्रफल और जनसंख्या

क्र. सं.	*केंद्र शासित राज्य*	*राजधानी*	*जिलों की संख्या*	*क्षेत्रफल*	*जनसंख्या**
1.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	पोर्ट ब्लेयर	3	8,249	3,80,581
2.	चंडीगढ़	चंडीगढ़	1	114	10,55,450
3.	दादर और नागर हवेली	सिलवासा	1	491	3,43,709
4.	दमन और दीव	दमन	2	111	2,43,247
5.	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली	दिल्ली	9	1,483	1,67,87,941
6.	लक्षद्वीप	कवरत्ती	1	30	64,473
7.	पुदुच्चेरी	पुदुच्चेरी	4	490	12,47,953

स्रोत : http://india.gov.in (02.11.17)

* जनगणना 2011

परिशिष्ट III

जल उपलब्धता - द्रोणी के अनुसार

क्र. स.	*नदी द्रोणी का नाम*	*औसत वार्षिक उपलब्धता (क्यूबिक कि.मी.)*
1.	सिंधु (सीमा तक)	73.31
2.	(क) गंगा	525.02
	(ख) ब्रह्मपुत्र, बराक और अन्य	585.60
3.	गोदावरी	110.54
4.	कृष्णा	78.12
5.	कावेरी	21.36
6.	पेन्नार	6.32
7.	महानदी एवं पेन्नार के बीच पूर्व बहती नदियाँ	22.52
8.	पेन्नार एवं कन्याकुमारी के बीच पूर्व बहती नदियाँ	16.46
9.	महानदी	66.88
10.	ब्राह्मनी एवं बैतरनी	28.48
11.	स्वर्णरेखा	12.37
12.	साबरमती	3.81
13.	माही	11.02
14.	कच्छ की पश्चिम में बहती नदियाँ, साबरमती तथा लूनी	15.10
15.	नर्मदा	45.64
16.	तापी	14.88
17.	तापी से ताद्री की ओर पश्चिम में बहती नदियाँ	87.41
18.	ताद्री से कन्याकुमारी की ओर पश्चिम में बहती नदियाँ	113.53
19.	राजस्थान के रेगिस्तान अंत: स्थलीय अपवाह का क्षेत्र	NEG.
20.	बांग्लादेश एवं बर्मा में वाहित होती लघु नदी द्रोणियाँ	31.00
	कुल	**1869.35**

स्रोत : http://mowr.gov.in (02.11.17)

परिशिष्ट

IV

राज्य/केंद्र शासित क्षेत्रों में वनाच्छादन (क्षेत्र वर्ग कि.मी. में)

राज्य/केंद्र शासित क्षेत्र	भौगोलिक क्षेत्र	2013 मूल्यांकन (वनाच्छादन)			
		अति सघन वन	मध्यम सघन वन	विरल वन	कुल वन क्षेत्र
आंध्र प्रदेश	275,069	850	26,079	19,187	46,116
अरुणाचल प्रदेश	83,743	20,828	31,414	15,079	67,321
असम	78,438	1,444	11,345	14,882	27,671
बिहार	94,163	247	3,380	3,664	7,291
छत्तीसगढ़	135,191	4,153	34,865	16,603	55,621
दिल्ली	1,483	6.76	49.38	123.67	179.81
गोवा	3,702	543	585	1,091	2,219
गुजरात	196,022	376	5,220	9,057	14,653
हरियाणा	44,212	27	453	1,106	1,586
हिमाचल प्रदेश	55,673	3,224	6,381	5,078	14,683
जम्मू और कश्मीर	222,236	4,140	8,760	9,638	22,538
झारखंड	79,714	2,587	9,667	11,219	23,473
कर्नाटक	191,791	1,777	20,179	14,176	36,132
केरल	38,863	1,529	9,401	6,992	17,922
मध्य प्रदेश	308,245	6,632	34,921	35,969	77,522
महाराष्ट्र	307,713	8,720	20,770	21,142	50,632
मणिपुर	22,327	728	6,094	10,168	16,990
मेघालय	22,429	449	9,689	7,150	17,288
मिज़ोरम	21,081	138	5,900	13,016	19,054
नागालैंड	16,579	1,298	4,736	7,010	13,044
ओडिशा	155,707	7,042	21,298	22,007	50,347
पंजाब	50,362	0	736	1,036	1,772
राजस्थान	342,239	72	4,424	11,590	16,086
सिक्किम	7,096	500	2,161	697	3,358
तमिलनाडु	130,058	2,948	10,199	10,697	23,844
त्रिपुरा	10,486	109	4,641	3,116	7,866
उत्तर प्रदेश	240,928	1,623	4,550	8,176	14,349
उत्तराखंड	53,483	4,785	14,111	5,612	24,508
पश्चिम बंगाल	88,752	2,971	4,146	9,688	16,805
अंडमान व निकोबार	8,249	3,754	2,413	544	6,711
चंडीगढ़	114	1.36	9.66	6.24	17.26
दादरा और नगर हवेली	491	0	114	99	213
दमन और दीव	12	0	1.87	7.4	9.27
लक्षद्वीप	32	0	17.18	9.88	27.06
पुदुच्चेरी	480	0	35.23	14.83	50.06
कुल	**3,287,263**	**83,502**	**3,18,745**	**2,95,651**	**6,97,898**

स्रोत : इंडिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट, 2013-14

परिशिष्ट

V

राज्य अनुसार देश में संरक्षित क्षेत्र तंत्र का विस्तृत वितरण

क्र. सं.	राज्य / केंद्र शासित प्रदेश	नेशनल पार्क की संख्या	वन्य प्राणी अभयवन की संख्या	संरक्षण निचय की संख्या	समुदाय निचय की संख्या
1.	आंध्र प्रदेश	6	21	0	0
2.	अरुणाचल प्रदेश	2	11	0	0
3.	असम	5	18	0	0
4.	बिहार	1	12	0	0
5.	छत्तीसगढ़	3	11	0	0
6.	गोवा	1	6	0	0
7.	गुजरात	4	23	1	0
8.	हरियाणा	2	8	3	0
9.	हिमाचल प्रदेश	5	32	3	0
10.	जम्मू और कश्मीर	4	15	33	0
11.	झारखंड	1	11	0	0
12.	कर्नाटक	5	27	8	1
13.	केरल	6	17	0	1
14.	मध्य प्रदेश	9	25	0	0
15.	महाराष्ट्र	6	37	2	0
16.	मणिपुर	1	3	0	0
17.	मेघालय	2	3	0	22
18.	मिज़ोरम	2	8	0	0
19.	नागालैंड	1	3	0	0
20.	ओडिशा	2	18	0	0
21.	पंजाब	0	13	1	2
22.	राजस्थान	5	25	10	0
23.	सिक्किम	1	7	0	0
24.	तमिलनाडु	5	29	1	0
25.	त्रिपुरा	2	4	0	0
26.	उत्तर प्रदेश	1	23	0	0
27.	उत्तराखंड	6	7	4	0
28.	पश्चिम बंगाल	6	15	0	0
29.	अंडमान व निकोबार	9	96	0	0
30.	चंडीगढ़	0	2	0	0
31.	दादर और नगर हवेली	0	1	0	0
32.	लक्षद्वीप	0	1	0	0
33.	दमन और दीव	0	1	0	0
34.	दिल्ली	0	1	0	0
35.	पुदुच्चेरी	0	1	0	0
	कुल	**103**	**535**	**66**	**26**

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2015-16, भारत वन सर्वेक्षण

शब्दावली

अपवाह क्षेत्र : वह क्षेत्र, जो एक मुख्य नदी और उसकी सहायक नदियों द्वारा अपवाहित होता है।

अवर्गीकृत वन : एक क्षेत्र, जो वन के रूप में तो अंकित होता है, परन्तु वनों की संरक्षित अथवा आरक्षित संवर्ग में सम्मिलित न हो। इनका स्वामित्व विभिन्न राज्यों में अलग-अलग होता है।

अवदाब : मौसम विज्ञान में यह अपेक्षाकृत निम्न वायुदाब के उन क्षेत्रों को इंगित करता है, जो समशीतोष्ण कटिबंधों में पाए जाते हैं। यह समशीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवातों का पर्याय भी समझा जाता है।

अवनालिका अपरदन : चट्टान तथा मृदा का जल के सांद्रित वाह से ऐसा अपरदन जिसमें अवनालिकाएँ बन जाएँ।

आधार शैल : मृदा तथा अपक्षयित पदार्थ के नीचे उपस्थित कठोर चट्टान।

आरक्षित वन : भारतीय वन अधिनियम अथवा राज्य वन अधिनियमों के प्रावधानों के अंतर्गत अधिसूचित एक क्षेत्र, जो पूर्ण रूप से रक्षित होता है। इन आरक्षित वनों में जब-तक अनुमति न हो सभी क्रियाएँ प्रतिबंधित होती हैं।

उपमहाद्वीप : एक बड़ी भौगोलिक इकाई, जो शेष महाद्वीप से अलग एक विशिष्ट पहचान रखती हो।

कैल्सियमी : चूने की उच्च मात्रा से निर्मित अथवा युक्त।

जलोढ़ मैदान : नदी द्वारा लाए गए जलोढ़क अथवा महीन चट्टानी सामग्री द्वारा निर्मित भूमि का एक समतल क्षेत्र।

जलवायु : किसी समयावधि में (लगभग 30 वर्ष या उससे अधिक) पृथ्वी के धरातल के एक विस्तृत क्षेत्र की औसत मौसमी दशाएँ।

जेट प्रवाह : अत्यंत प्रबल एवं अचर पछुवा पवन, जो क्षोभ-सीमा के एकदम नीचे बहती है।

जीव मंडल निचय : ये बहुद्देशीय संरक्षित क्षेत्र होते हैं, जिनमें हर आकार के पौधे एवं जंतु को उनके प्राकृतिक पर्यावास में संरक्षित किया जाता है। इसके प्रमुख उद्देश्य हैं : (1) प्राकृतिक विरासत की विविधता एवं अखंडता को उसकी संपूर्णता में संरक्षित एवं पोषित करना, (2) पारिस्थितिक संरक्षण एवं पर्यावरण के अन्य पक्षों पर अनुसंधान को प्रोन्नत करना, (3) शिक्षा, जागरूकता और व्याख्या करने की सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

ज्वारनदमुख : नदी का ज्वारीय मुख, जहाँ ताज़ा और लवणीय जल मिल जाते हैं।

झील : पृथ्वी के धरातल के एक धँसे हुए भाग पर जल की उपस्थिति, जो चारों ओर से भूभाग से आवृत्त हो।

तट	: स्थल और समुद्र के बीच का संपर्क क्षेत्र। इसमें भूमि की वह पट्टी भी सम्मिलित होती है, जो समुद्री तट के साथ लगती है।
तटीय मैदान	: तट तथा अंत:स्थलीय ऊँची भूमि के बीच स्थित समतल निम्न भूभाग।
तराई	: जलोढ़ पंखों के निचले भागों में दलदली भूमि और वनस्पति की एक पेटी।
दर्रा	: पर्वत श्रेणी से गुजरता एक मार्ग, जो एक कॉल या विदर की रेखा का अनुसरण करता है।
द्वीप	: महाद्वीप की तुलना में एक ऐसी भूसंहित, जो चारों ओर जल से घिरी हो।
द्वीप समूह	: द्वीपों का एक समूह, जो आपस में निकट अवस्थित होते हैं।
नाइस	: कणिकामय गठन वाली कायांतरित शैल, जिस की संरचना पट्टित होती है। इसकी रचना पर्वत निर्माण एवं ज्वालामुखी क्रिया से संबद्ध बड़े पैमाने पर ताप एवं दाब के अनुप्रयोग से जुड़ी हुई है।
पठार	: समतल भूमि की तुलना में एक उच्चस्थ विस्तृत भूखंड।
पश्च जल	: जल का वह विस्तार जिससे नदी का मुख्य प्रवाह बाह्य पंथ से गुजर जाए। यह जल मुख्य जल से जुड़ा होता है, परन्तु इसके प्रवाह की दर अत्यन्त निम्न होती है।
प्राणी जगत	: किसी निश्चित काल अथवा प्रदेश का पशु जीवन।
प्रायद्वीप	: समुद्र की ओर बढ़ा हुआ भूमि का एक भाग।
प्रवाल	: चूना-स्रावी एक समुद्री पॉलिप, जो उष्ण क्षेत्र में स्थित उथले समुद्र में कॉलोनी में पाया जाता है। यह प्रवाल भित्तियों को बनाता है।
प्लाया	: अंत:स्थली अपवाह बेसिन का निम्न, केंद्रीय भाग। प्लाया न्यून वर्षा के क्षेत्रों में पाए जाते हैं।
बंध बनाना	: इसमें जल के संरक्षण तथा फसलों के उत्पादन में वृद्धि के लिए मिट्टी अथवा पत्थरों का भराव करके बनाया जाने वाला बंध बनाना।
भूस्खलन	: अपरूपणी तल के साथ-साथ गुरुत्वाकर्षण के प्रभावाधीन चट्टानों एवं मलबे की संहति का तीव्रता से नीचे की ओर बृहत संचलन।
मानसून	: एक बृहत क्षेत्र पर पवनों की दिशा में संपूर्ण प्रत्यावर्तन जिससे ऋतु परिवर्तन होता है।
महाखड्ड/गॉर्ज	: खड़ी व चट्टानी पार्श्वों वाली गहरी घाटी।
मैदान	: समतल अथवा मंद तरंगित भूमि का एक विस्तृत क्षेत्र।
मृदा परिच्छेदिका	: भूमि की सतह से पैतृक चट्टान तक यह मृदा का एक ऊर्ध्वाधर परिच्छेद अथवा खंड होती है।
राष्ट्रीय पार्क	: राष्ट्रीय पार्क वन्य जीवन के संरक्षण के लिए पूर्णत: सुरक्षित एक क्षेत्र होता है, जिसमें वन कटाव, पशुचारण और खेती जैसी क्रियाओं की अनुमति नहीं होती।
वलन	: भूपर्पटी के किसी क्षेत्र में संपीडन के परिणामस्वरूप चट्टानी स्तरों में आया मोड़।

विसर्प : किसी मंद गति से बहने वाली नदी की धारा के मार्ग में एक सुस्पष्ट वलयाकार मोड़।

विवर्तनिक : भूगर्भ से उत्पन्न बल, जो भूआकृतिक लक्षणों में बृहत परिवर्तन लाते हैं।

शरण स्थली : शरण स्थली एक ऐसा क्षेत्र होता है, जो केवल जंतुओं के संरक्षण के लिए आरक्षित होता है। इनमें लकड़ी काटने व छोटे वनोत्पाद संग्रहण करने जैसी गतिविधियों की तब तक अनुमति होती है जब तक ये जंतुओं को नकारात्मक ढंग से प्रभावित नहीं करतीं।

शुष्क : ऐसी जलवायु अथवा प्रदेश के लिए प्रयुक्त, जहाँ वर्षा अपर्याप्त होती है।

संरक्षण : भविष्य के लिए प्राकृतिक पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा। इसमें खनिजों, भूदृश्य, मृदा और वनों का विनाश और अतिदोहन रोकने के लिए प्रबंधन भी सम्मिलित है।

संरक्षित वन : भारतीय वन अधिनियम अथवा राज्य वन अधिनियमों के प्रावधानों के अंतर्गत अधिसूचित एक क्षेत्र जिसे सीमित मात्रा में संरक्षण उपलब्ध होता है। इन संरक्षित वनों में जब-तक निषेध न हो सभी क्रियाओं की अनुमति होती है।

हिमनद : हिम एवं बर्फ की संहति, जो अपने जमाव के स्थान से धीरे-धीरे बाहर की ओर खिसकती रहती है और अपने मार्ग में एक विस्तृत खड़े पार्श्वों वाली घाटी की क्रमिक रचना करती है।

ह्यूमस : मृदा में उपस्थित मृत जीवांश।

क्षिप्रिका : किसी नदी का वह भाग, जहाँ जल की गति बहुत तीव्र होती है, क्योंकि नदी-तली में उपस्थित कठोर चट्टानों से अवरोध पैदा होता है।